ओ३म्

पाक्षिक

परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५७ अंक - २२ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र नवम्बर (द्वितीय) २०१५

महर्षि दयानन्द सरस्वती

योग साधना शिविर की झलकियाँ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५७ **अंक** : २२
दयानन्दाब्द: १९१
विक्रम संवत्: कार्तिक शुक्ल, २०७२
कलि संवत्: ५११६
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११६

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

नवम्बर द्वितीय २०१५

अनुक्रम

१. हाँ, वेद में गो हत्यारे को मारने का....	सम्पादकीय	०४
२. स्तुता मया वरदा वेदमाता-२२		०७
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०८
४. प्राणोपासना	तपेन्द्र कुमार	१५
५. वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन		१८
६. अध्ययन और अध्यापन की ऋषि......	स्वामी समर्पणानन्द	२०
७. पुस्तक-समीक्षा		२४
८. ऋषि मेला - २०१५ कार्यक्रम		२५
९. ईश्वर है या नहीं एक विश्लेषण	ब्र. कश्यप कुमार	२६
१०. स्वतन्त्रता दिवस का महत्त्व	वेदप्रकाश आर्य	२८
११. मानवीय भोजन तथा उसका.....	आचार्य शिवकुमार	३०
१२. वैदिक पशुबन्ध इष्टि (यज्ञ) का.....	पुष्पा गुप्ता	३२
१३. संस्था-समाचार		३६
१४. जिज्ञासा समाधान-९९	आचार्य सोमदेव	३९
१५. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

हाँ, वेद में गो हत्यारे को मारने का आदेश है

आजकल गो मांस खाने, न खाने को लेकर तथाकथित साहित्यकार, मानव अधिकारवादी, प्रगतिशील और कांग्रेस समर्थक राजनैतिक लोग प्रतिदिन ही शोर करते हैं। वास्तविकता तो यह है कि इनको गाय, घोड़े से कुछ भी लेना देना नहीं है, इनका उद्देश्य हिन्दू विरोध है। इस देश में गत साठ वर्षों तक जो लोग सत्ता के साथ रहे और वहाँ से लाभ उठाते रहे, आज उनका सत्ता सुख छिन गया तो चिल्ला रहे हैं। यदि इन लोगों के अन्दर थोड़ी भी संवेदनशीलता या मनुष्यता होती तो जो कुछ आज मुस्लिम देशों में हो रहा है, उसका विरोध करने का साहस अवश्य करते। मूल रूप से ये लोग पाखण्डी हैं, इनको हिन्दू विरोध करने का आर्थिक लाभ मिलता था, मोदी सरकार के आने से वह बन्द हो गया, इस कारण इनका यह पीड़ा-प्रदर्शन उचित ही है। हिन्दू विरोध के नाम पर राष्ट्रद्रोह करना इनका स्वभाव बन चुका है।

जो लोग ऐसा कहते हैं कि हिन्दू लोग गौ की तुलना में मनुष्य का मूल्य नहीं समझते, किसी ने किसी जानवर को मार दिया तो क्या हो गया, जानवर का मनुष्य के सामने क्या मूल्य है? संसार के सभी प्राणी मनुष्य के लिए ही बने हैं। उन्हें मारने-खाने में कोई अपराध नहीं होता। संसार की सभी वस्तुयें मनुष्य के उपयोग के लिये बनी हैं, इसका यह अभिप्राय तो नहीं हो सकता कि आप उन्हें नष्ट कर दें। संसार के प्राणी भी मनुष्य के लिये हैं तो इनको मारकर खा जाना ही तो एक उपयोग नहीं है। पहली बात, जो भी संसार की वस्तुयें और प्राणी हैं, वे सभी मनुष्यों की साझी सम्पत्ति हैं, सबके लिये उनका उपयोग होना चाहिए। सबका हित सिद्ध होता हो, ऐसा उपयोग सबको करना उचित है। संसार की वस्तुओं का श्रेष्ठ उपयोग मनुष्य की बुद्धिमत्ता की कसौटी है। कोई मनुष्य घर को आग लगाकर कहे कि लकड़ियाँ तो मेरे जलाने के लिये ही हैं। लकड़ियाँ जलाने के काम आती है, परन्तु घर बनाने के भी काम आती हैं, उनका यथोचित उपयोग करना मनुष्य का धर्म है।

कोई भी मनुष्य किसी का अहित करके अपना हित साधना चाहता है तो उसको ऐसा करने का अधिकार नहीं दिया जा सकता। समाज में व्यक्तिगत आचरण की पूर्ण स्वतन्त्रता है, परन्तु सामाजिक परिस्थितियों में प्रत्येक व्यक्ति को समाज के नियमों के अधीन चलना होता है। जो लोग गाय का मांस खाने को अधिकार मानते हैं, वे मनुष्य का मांस खाने को भी अधिकार मान सकते हैं। समाज में कोई ऐसा करता है तो उसे अपराधी माना जाता है, उसे दण्डित किया जाता है, जैसा निठारी काण्ड में हुआ है। वैसे ही गाय भारत में हिन्दू समाज में न मारने योग्य कही गई है। आप कानून व नियम का विरोध करके गो मांस खाने को अपना अधिकार बता रहे हैं। एक वर्ग-बहुसंख्यक वर्ग जब गौ हत्या की अनुमति नहीं देता, तब यदि आप ऐसा करते हैं तो देश और समाज से द्रोह करना चाह रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में जब एक वर्ग नियम को मानने से इन्कार करता है तो दूसरा वर्ग भी नियम तोड़ने लगता है, जैसा कश्मीर में हुआ, यदि गोहत्या करना, गोमांस खाना इंजीनियर रशीद का अधिकार है तो गाय की रक्षा करने का और गोहत्यारे को दण्डित करना भी हिन्दू का अधिकार है। ये दोनों स्थिति समाज में अराजकता उत्पन्न करने वाली हैं, समाज के हित में नहीं है। हमें समाज के हित को सर्वोपरि रखना होगा। यदि गोहत्या करके एक अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करना चाहता है तो दूसरा सूअर को लेकर आपकी भावनाओं को आहत करता है। यह संघर्ष निन्दनीय है।

जो लोग गोहत्या के पक्षधर हैं, वे अपने भोजन की चिन्ता में पूरे समाज के भोजन पर संकट उत्पन्न कर रहे हैं। गाय का मांस तो कुछ लोगों की आवश्यकता है, परन्तु गाय का दूध पूरे समाज की आवश्यकता है। यह मांस खाने वालों की भी आवश्यकता है। इन लोगों के मांस खाने से समाज में आज दूध का भयंकर संकट उत्पन्न हो गया है। आपको अपने परिवार में दूध चाहिए या नहीं, छोटे बच्चों को दूध चाहिए, बड़ों को, रोगियों को दूध चाहिए।

घर में दूध, दही, मक्खन, घी, मिठाई, मावा, खीर, पनीर आदि में प्रतिदिन जितने दूध की आवश्यकता है, दूध का उत्पादन उसकी अपेक्षा बहुत थोड़ा हो रहा है, इसीलिये दूध, दही, मावा, पनीर, मिठाई में सब कुछ नकली आ रहा है। दूध से बनी हर वस्तु में आज मिलावट है, क्योंकि गौहत्या के निरन्तर बढ़ने से गाय, भैंस आदि पशु घट गये हैं। यदि यही क्रम जारी रहा तो आपके लिये सोयाबीन का आटा घोलकर पीने के अतिरिक्त कोई उपाय ही नहीं बचेगा।

गोमांस खाने और गोमांस के व्यापार के कारण देश गहरे संकट की ओर जा रहा है। भोजन में गोदुग्ध के पदार्थों को निकाल दिया जाय तो भोजन में कुछ बचता नहीं है। हम समझते हैं कि कारखानों, उद्योगों से समृद्धि आती है, समृद्धि का वास्तविक आधार पशुधन है। मनुष्य की जितनी आवश्यकताओं की पूर्ति पशुओं से प्राप्त होने वाली वस्तुओं से होती है, उतनी अन्य पदार्थों से नहीं होती। जीवित पशु हमें अधिक लाभ पहुँचाते हैं, मरकर तो पहुँचाते ही हैं। स्वयं मरे पशु का उपयोग कम नहीं अतः पशुवध की आवश्यकता नहीं है। गोदुग्ध और उससे बने पदार्थ जहाँ मनुष्य के लिये बल, बुद्धि के बढ़ाने वाले होते हैं, वहाँ मांस तमोगुणी भोजन है, इसलिये महर्षि दयानन्द ने पहले ही घोषणा कर दी थी कि गौ आदि पशुओं के नाश से राजा और प्रजा का भी नाश होता है। इस भारत के नाश के लिये अंग्रेजों ने हमारी समृद्धि के दो सूत्र समझे थे और उनका पूर्णतः नाश किया था। प्रथम हमारी शिक्षा, हमारे विचार और चिन्तन के उत्कर्ष का आधार थी, उसे नष्ट किया तथा दूसरा पशुधन विशेष रूप से गाय जो हमारी समृद्धि का मूल थी, उसका नाश कर इस देश को दरिद्र बना गये। उन्हीं के दलालों के रूप में जो लोग इस देश में उन्हीं से पोषण पाते हैं, उन्हीं के इशारे पर काम करते हैं, उन्हीं का षड्यन्त्र है। वे गोमांस खाने जैसी बातें उठाकर विवाद उत्पन्न करते हैं, विदेशों में देश की छवि खराब करते हैं।

गाय हमारे बीच हिन्दू-मुसलमान की पहचान नहीं है, गाय तो सब की है। गाय उपयोगिता की दृष्टि से दूध न देने पर भी उपयोगी है। उसके गोबर से खाद और गोमूत्र से औषध का निर्माण होता है। पिछले दिनों गाय पर किये जा रहे अनुसन्धानों ने सिद्ध कर दिया है कि गाय न केवल हमारी भोजन की समृद्धि को अपने दूध से बढ़ाती है, अपितु खेती की उर्वरा-शक्ति का संरक्षण भी गोबर की खाद से करती है। गोमूत्र से अमेरिका जैसे देश कैंसर की दवा का निर्माण करते हैं। महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में गाय की रक्षा के लिये बहुत प्रयत्न किया था। स्वामी जी ने गोहत्या के विरोध में करोड़ों लोगों के हस्ताक्षर कराकर महारानी विक्टोरिया को भेजने और गोहत्या बन्द करने का आन्दोलन चलाया था। स्वामी जी ने गोकरुणानिधि में एक गाय के जीवन भर के दूध से कितने लोगों का पालन-पोषण होता है तथा एक गाय के मांस से एक बार में कितने लोगों का पेट भरता है, इसकी तुलना करके गौ का अर्थशास्त्र समझाया था। गाय को हिन्दुओं ने पवित्र माना, यह केवल एक धार्मिक भावना का प्रश्न नहीं है। आज गाय के दूध के गुणों के कारण भारतीय गायों की नस्ल का संरक्षण ब्राजील और डेन्मार्क जैसे देशों में किया जा रहा है। वहाँ गौ संवर्धन का कार्य बड़े व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में हमारे देश में यह विवाद निन्दनीय और चिन्ताजनक है। भारतीय गायों की तुलना में विदेशी नस्ल की गायों के दूध में कितना विष है, इसका बहुत बड़ा अनुसन्धान हो चुका है। भारतीय गाय आज समाप्त होने के कगार पर है। ऐसी परिस्थिति में यह विवाद स्वयं प्रेरित नहीं कहा जा सकता। जो सामाजिक ताने-बाने को तोड़कर राष्ट्र की प्रगति को रोकना चाहते हैं, यह ऐसे लोगों का काम है।

भोजन की स्वतन्त्रता के नाम पर जो कानून को तोड़ना चाहते हैं, उन्हें यह भी अवश्य ही ज्ञात होगा कि स्वतन्त्रता की बात तो तब आती है, जब आपके पास कोई वस्तु सुलभ हो। यदि कोई यह समझता है कि उसे गोमांस खाने की स्वतन्त्रता और अधिकार है तो क्या गोमांस खाने वालों के अधिकार से गोदुग्ध पीने वालों का अधिकार समाप्त हो जाता है। गोमांस और गोदुग्ध के अधिकार में गोमांस खाने की बात करना, दिमागी दिवालियेपन की पहचान है। नई वैज्ञानिक खोजों ने सिद्ध किया है कि प्राणियों की हिंसा और निरन्तर बढ़ रही क्रूरता से पृथ्वी का पर्यावरण सन्तुलन

बिगड़ता जा रहा है। प्राणियों की हत्या करने का कार्य नई तकनीक और विज्ञान के प्रयोग से बहुत बड़े स्तर पर चलाया जा रहा है, उसमें क्रूरता भी उतनी ही बढ़ गई है। मनुष्य चमड़े के लोभ में पशुओं के गर्भस्थ शिशुओं की हत्या करता है और भोजन के नाम पर पशुओं को यातनायें देता है। इन यातनाओं से मनुष्य का स्वभाव क्रूर होता है। आजकल हमारे समाज में बच्चों से लेकर बड़ों तक, ग्राम से नगर तक सबके स्वभाव में असहिष्णुता और क्रूरता का समावेश हुआ है, उसका मुख्य कारण हमारे व्यवहार में आई हुई हिंसा है। जिन धर्मों में दया और संयम का स्थान नहीं है, उनको धर्म कहना ही उचित नहीं है, अहिंसा और संयम के बिना समाज में कभी भी मर्यादाओं की रक्षा नहीं की जा सकती। गौ आदि प्राणियों के रक्षण और पालन से समृद्धि के साथ सद्गुणों का भी समावेश होता है।

कुछ लोग गाय को माता कहने का मजाक बनाने का प्रयत्न करते हैं। ऐसे लोग नहीं जानते कि इन शब्दों का भावनात्मक मूल्य क्या है? भारतीय जब भी संसार के पदार्थों के गुणों को समझते हैं और उनसे लाभ उठाते हैं, उनके साथ आत्मीय भाव विकसित करते हैं। जिनके साथ मनुष्य का आत्मीय भाव होता है, मनुष्य उनकी रक्षा करता है, उन वस्तुओं से प्रेम करता है। हिन्दू भूमि को माता कहता है, गाय को माता कहता है, अपना पालन-पोषण करने वाली धरती आदि को माता कहता है। सम्बन्धों में बड़े गुरु, राजा आदि की पत्नी को माता कहता है। यह शब्द सम्मान और उसके प्रति कर्त्तव्य का बोध कराने वाला है।

जो लोग गाय का मांस खाने को अपना अधिकार बताते हैं और तर्क देते हैं कि ईश्वर ने पशुओं को मनुष्य के खाने के लिये बनाया है, उनसे पूछा जाना चाहिए कि क्या सूअर को ईश्वर ने न बनाकर क्या मनुष्य ने बनाया है और सूअर भी यदि ईश्वर ने बनाया है तो क्या ईश्वर अपवित्र वस्तु व प्राणी बनाता है? वस्तु व प्राणियों की पवित्रता-अपवित्रता मनुष्य की अपेक्षा से होती है। परमेश्वर के लिये सारी रचना पवित्र ही है। जहाँ तक मनुष्य अपने को पवित्र समझें तो उन्हें योग दर्शन की पंक्ति का स्मरण करना चाहिए- मनुष्य का शरीर जन्म से मृत्यु तक अपवित्रता का पर्याय है। फिर कोई प्राणी रचना से कैसे पवित्र-अपवित्र है, परमेश्वर की सभी रचना पवित्र है। मनुष्य अपने ज्ञान, रुचि एवं आवश्यकता के अनुसार वर्गीकरण कर लेता है।

आज गौ को बचाने के लिए गोमांस के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाने की आवश्यकता है। विदेशों में, विशेषकर खाड़ी के देशों को मांस का निर्यात होता है, मांस के व्यापारी धन के लोभ में अधिक-अधिक गोमांस का निर्यात कर रहे हैं। इस पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। राज्य व्यवस्था में गोहत्या राज्य का विषय होने से प्रशासन में एक मत नहीं हो पा रहा है। भाजपा शासित राज्यों में गोहत्या पर प्रतिबन्ध और इस अपराध के लिये दण्ड विधान है, दूसरे राज्यों में नहीं। इस कार्य को करने की आवश्यकता है।

अब एक बात सोचने की है, गोहत्यारे को मृत्युदण्ड बयान विवादित कैसे है? वेद में तो हत्यारे को मारने का विधान स्पष्ट है, विवादित बयान उनका हो सकता है जो लोग वेद में गो हत्या करने का विधान बताते हैं। वेद में हत्या का विधान होने से गो हत्यारे की हत्या तो हो नहीं जायेगी, क्योंकि भारत का शासन वेद के नियम से तो चलता नहीं है। यह तो भारत के संविधान से चलता है। कुरान में लिखा है कि काफिर को मारने वाले को खुदा जन्नत देता है, तो क्या लिखा होने से भारत में इसे लागू कर देंगे? वेद और कुरान में जो लिखा है, लिखा रहने दें, इससे परेशान होने की क्या आवश्यकता है, वेद तो कहता है- यदि कोई तुम्हारे गाय, घोड़े, पुरुष की हत्या करता है तो सीसे की गोली से मार दो। मन्त्र इस प्रकार है-

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नासो अवीरहा।

- अथर्ववेद १/१६/४

- धर्मवीर

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४

स्तुता मया वरदा वेदमाता-२२

सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवनेन सर्वान्।

एक परिवार एक साथ सुखपूर्वक कैसे रह सकता है, यह इस सूक्त का केन्द्रीय विचार है। सामनस्य सूक्त का यह अन्तिम मन्त्र है। इस मन्त्र में परिवार को एक साथ सौमनस्यपूर्वक रहने के लिये उसको धार्मिक होने की प्रेरणा दी गई है। मन्त्र में एक शब्द है 'सध्रीचीनान्'। परिवार के जो लोग एक साथ रह रहे हैं, वे 'संमनसः' समान मत वाले होने चाहिएँ। समान मन एक दूसरे के लिये अनुकूल सोचने वाले होते हैं। परस्पर हित की कामना करते हैं, तभी समान बनते हैं। वेद कहता है- समान हित सोचने के लिये 'एकश्नुष्टीन्'- एक धर्म कार्य में प्रवृत्त होने वाला होना चाहिए। जो धार्मिक नहीं हैं, वे शान्त मन वाले, परोपकार की भावना वाले नहीं हो सकते। परिवार को सुखी और साथ रखने के लिये परिवार के सदस्यों का धार्मिक होना आवश्यक है। परिवार के सदस्य धार्मिक हैं, तो उनमें शान्ति और सहनशीलता का गुण होगा। धार्मिक व्यक्ति स्वाभाविक रूप से उदार और सहनशील होता है।

आज समाज में जहाँ भी संघर्ष है, पारिवारिक विघटन है, वहाँ सहनशीलता का अभाव देखने में आता है। हम क्रोध करने को, विरोध करने को, असहमति को अपना सामर्थ्य मान बैठे हैं, जबकि वस्तुस्थिति यह है कि जिस मनुष्य को जितनी शीघ्रता से क्रोध आता है, प्रतिक्रिया व्यक्त करता है, वह उतना ही दुर्बल होता है। सामर्थ्यवान व्यक्ति का सहज गुण क्रोध न आना है, जिसे क्रोध नहीं आता, वही सहनशील होता है। परिवार के सदस्य धार्मिक होते हैं तो वे सहनशील और उदार होते हैं। परिवार के बड़े सदस्यों में उदारता तथा छोटे सदस्यों में नम्रता और बड़ों के प्रति आदर का भाव होता है। ये गुण धर्म की कसौटी है। परिवार में धार्मिकता होने से ईश्वर-भक्ति का भाव सभी सदस्यों में रहता है। अच्छे कार्यों में मन लगने से बुरे कार्यों और स्वार्थ भावना से मनुष्य दूर रहता है।

धार्मिक होना मनुष्य के लिये आवश्यक है, अधार्मिक व्यक्ति में स्वार्थ और अन्याय का भाव आता है। परिवार के किसी भी सदस्य में स्वार्थ का भाव उत्पन्न हो जाता है तो मनुष्य अन्याय करने में संकोच नहीं करता। एक गाँव में दो भाई एक साथ रहते थे। परिवार में सामञ्जस्य था, अच्छी प्रगति हो रही थी। दोनों भाई दुकान में बैठे थे। बच्चे बाहर से खेलते हुए आये। बड़े भाई के पास आम रख थे, बड़े भाई ने बच्चों में आम बाँट दिये। बच्चे आम लेकर खेलने चले गये। दो दिन बाद छोटे भाई ने बड़े भाई को प्रस्ताव दिया- भाई अब हमें अपना व्यवसाय, घर बाँट लेना चाहिए। बड़े भाई ने पूछा- तुम्हारे मन में ऐसा विचार क्यों आया, तो छोटे भाई ने बड़े भाई से कहा- भैया जब परसों बच्चे दुकान पर आये, आपने बच्चों को आम बाँटे, परन्तु आपने अपने बेटे को क्रम तोड़कर आम का बड़ा फल दिया, तभी मैंने निर्णय कर लिया था कि अब हमें अलग हो जाना चाहिए। बड़ा भाई कुछ नहीं बोल सका और दोनों भाई अलग हो गये।

इस प्रकार धर्म उचित व्यवहार का नाम है। जो लोग धर्म को अनावश्यक या वैकल्पिक समझते हैं, उन्हें जानने की आवश्यकता है कि धर्म विकल्प नहीं, जीवन का अनिवार्य अंग है।

मनुष्य को स्वार्थ, अन्याय से दूर रहने के लिये धार्मिक होना चाहिए। धार्मिक व्यक्ति परोपकार करने में प्रवृत्त होता है। जिस परिवार के सदस्य धार्मिक आचरण और परोपकार की भावना वाले होते हैं, वही परिवार सुखी और संगठित रह सकता है।

क्रमशः ....

कुछ तड़प-कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

ये शुभ लक्षण हैं :- आत्म-निरीक्षण करने वाले व्यक्ति व संगठन ही आगे बढ़ते हैं। जो अपने गुण-दोषों पर विचार नहीं करते, वे पिछड़ जाते हैं। आर्य समाज के बहुत से विद्वानों व अनुभवी अधिकारियों से अनेक बार यह सुनने का अवसर मिला है कि आर्य समाज में कुछ व्यक्ति तो अपनी संस्थायें व केन्द्र बना कर प्रशंसनीय कार्य करते दिखाई देते हैं, परन्तु संगठन की ओर से सामूहिक प्रयास न होने जैसे हैं। सत्संग में सम्मिलित होने तथा दूसरों को लाने की ललक अब साठ वर्ष पहले जैसी नहीं रही।

मैं युवकों को, साधुओं को कहता रहता हूँ कि संगठन से जुड़ो, दूसरों को जोड़ो और संगठन के लिये सदा सोचा करो। प्रायः हर साधु अपनी संस्था, अपने मठ और पाँच सितारा होटलनुमा आश्रम के भक्त तो बनाता है, परन्तु महात्मा नारायण स्वामी, स्वामी स्वतन्त्रतानन्द व महात्मा हंसराज के सदृश समाज के सत्संग में अनिवार्य रूप से आने की प्रेरणा कोई नहीं देता।

कालीकट केरल के श्रीयुत् आचार्य राजेश तथा श्री अरुण प्रभाकर से कालीकट में मैंने व डॉ. अशोक जी आर्य ने सानुरोध संगठन को बढ़ाने व महत्त्व देने की बात कही। चलभाष पर भी सदा यही कहता रहता हूँ।

हर्ष का विषय है कि वे इस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। श्री वियोगी हरि के ग्रन्थ 'हमारी परम्परा' के एक कथन की मैंने परोपकारी में चर्चा की थी कि आर्य समाज के समाज सुधार का तो गहरा प्रभाव पड़ा, परन्तु दार्शनिक विचारों की छाप आर्य समाज नहीं लगा सका। कालीकट से महर्षि के व्यक्तित्व के आध्यात्मिक पक्ष पर एक पठनीय ग्रन्थ आ रहा है। योगेश्वर, ऋषि, महर्षि दयानन्द पर भी आर्य समाज ने कुछ विशेष नहीं लिखा। हमारे सम्मेलनों में अपने बेगाने समाज सुधारक (Reformer) स्वामी दयानन्द की रट लगाते रहते हैं। इसी का यह परिणाम है कि ऋषि का आध्यात्मिक पक्ष विश्व के सामने आया ही नहीं। अपवाद रूप में ही कुछ-कुछ लिखा गया। कालीकट वालों ने इस परियोजना में मेरा सहयोग माँगा है। मैं ऐसे प्रत्येक कार्य में भागीदारी करने को तत्पर रहता हूँ। मित्रों के सहयोग से उन्हें ऐसा साहित्य उपलब्ध करवाया जायेगा। पं. चमूपति जी के ऐसे लेख और आचार्य भद्रसेन जी अजमेर तथा स्वामी वेदानन्द जी का साहित्य इसके लिए बहुत आवश्यक है। परोपकारिणी सभा ने ऋषि के पत्र-व्यवहार का नवीनतम संस्करण प्रेस में दे रखा है। इसका भी विशेष लाभ मिलेगा।

श्री राहुल जी अकोला से एक विशेष मिशन पर हैदराबाद गये। बहुत ठोस कार्य करके आप लौट रहे हैं। वहाँ मान्य श्री शत्रुञ्जय जी, श्री पं. रणवीर जी, प्रिय पुलकित आदि कई विचारवान् आर्यवीरों से सम्पर्क किया। ये सब शुभ लक्षण हैं। मान्य सोमदेव जी ऋषि उद्यान वाले उ.प्र. की यात्रा पर थे। मैंने कई युवकों से उनकी भेंट करवा दी। वे सब ऋषि मेला पर आयेंगे। उन्होंने आपसे बहुत कुछ सीखा। ये सब शुभ लक्षण हैं। हमें सबको जोड़ने की चिन्ता होनी चाहिये।

पश्चिम से प्राप्त एक दस्तावेज :- श्री राहुल जी ने पश्चिम से एक दस्तावेज मेरे पास पहुँचाई है। इसकी प्राप्ति से कुछ समय पूर्व मैंने पूना से प्रकाशित मान्य हरिकृष्ण जी की पुस्तक **'बाइबिल-ईश्वरीय सन्देश'** का प्राक्कथन लिखकर भेजा था। उसमें लिखा था कि हरिकृष्ण जी की यह कृति पं. लेखराम जी, ला. काशीराम जी, पं. गंगाप्रसाद जी चीफ जज तथा पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय की ईसाई मत विषयक पुस्तकों की कोटि में आती है। श्री राहुल जी के भेजे दस्तावेज में मैं यह पढ़कर चकित रह गया कि उसमें भी विदेशी ईसाई लेखक ने हमारी इस विषय की इन्हीं पुस्तकों को मौलिक व उच्च कोटि का माना है। आर्य समाज में तो कई लोगों के लिए लाला काशीराम जी का नाम ही पराया-सा है।

उस दस्तावेज में हमारे पं. हरनामसिंह जी की भी एक पुस्तक का उल्लेख है। यह मैंने कभी देखी नहीं।

पं. हरनामसिंह जी की शूरता :- इन पं. हरनामसिंह जी को अब हरियाणा, पंजाब के आर्य भूल चुके हैं। तड़प झड़प के पाठकों का आग्रह है कि एक दो प्रेरक प्रसंग अवश्य दिया करें। विचार बना कि जिन पं. हरनामसिंह को विदेशी स्मरण करते हैं, आर्यों को भी उस नररत्न का कुछ परिचय मिल जाये। श्री पं. हरनामसिंह जी एक गठीले गात के रोबीले व्यक्तित्व के विद्वान् थे। शरीर के तेज का प्रभाव श्रोताओं को खींचता था। 'ब्रह्मचर्य' विषय पर बहुत बोला करते थे। एक बार करनाल जिला के एक ग्राम

बहामुखड़ी की एक ग्यारह वर्षीय अबोध बाला का एक ६५वर्ष के बूढ़े से विवाह होने लगा। कन्या तथा उसकी माँ इस विवाह के विरोध में डट गई। वर पक्ष सम्पन्न था। उन के पास अपने मनोरथ की सिद्धि के लिए सब कुछ था। श्री पं. हरनामसिंह जी को यह समाचार प्राप्त हुआ। पण्डित जी ने इस पाप के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया। उमड़ घुमड़ कर क्षेत्र के आर्य पहुँचने लगे। दूल्हा पक्ष ने पण्डित जी व आर्यों पर लाठी वर्षा भी की। उनके पास क्या नहीं था? हरनाम सिंह जी की शूरता व ग्रामीण आर्यों के सहयोग से विवाह नहीं हुआ। यह घटना लम्बे समय तक करनाल जिला में स्मरण की जाती रही।

लाहौर के बिशप का ऐतिहासिक पत्र:- आर्य समाज की स्थापना के आरम्भिक काल में लाहौर के लाट पादरी Bishopकी बहुत प्रतिष्ठा व ख्याति थी। दिसम्बर ४ सन् १८७८ को उस बिशप ने दिल्ली में अपने बड़े पादरी को पत्र में यह लिखा-

"I was very sorry that the audience at a lecture which I gave in your large Delhi school-room one evening to the Hindustani speaking Baboos was not quite so large as might have been hoped, in consequence of another lecture going on at the same time by Dayanand Saraswati, a Hindu reformer, who is a popular speaker and sect leader........."?[१]

बिशप के कथन का भाव यह है कि मुझे बड़े दु:ख से यह कहना पड़ता है कि मैंने आपके स्कूल के बड़े कक्ष (हाल होगा) में जो व्याख्यान दिया था, उसमें हिन्दोस्तानी बोलने वाले बाबुओं की संख्या इतनी बड़ी नहीं थी, जितनी कि आशा की जाती थी। उस समय स्वामी दयानन्द सरस्वती, एक हिन्दू सुधारक तथा लोकप्रिय सुवक्ता का व्याख्यान हो रहा था। उसकी सभा में अपेक्षाकृत भारी भीड़ थी। बिशप महोदय के कथन का आशय यह है।

यह बिशप रेवाड़ी की भी चर्चा करता है। रेवाड़ी चर्च का गढ़ बन रहा था। ऋषि शीघ्र वहाँ पहुँच गये। वह गढ़ स्वत: ही ध्वस्त हो गया। यह अन्य स्रोतों से पता चलता है। तभी पश्चिम में चर्च में चिन्ता व्याप्त हुई। उन्हीं दिनों अमरीका के Sunday magazine में एक लम्बे लेख के साथ ऋषि का भव्य चित्र भी छपा था। पश्चिम में जिस भारतीय मुनि, महात्मा और विचारक का चित्र सबसे पहले छपा वह ऋषि दयानन्द थे। उपरोक्त अवतरण का मूल्याङ्कन करना इतिहासकारों का काम है।

इतिहास की साक्षी और अलगाववाद:- दुर्भाग्य का विषय है कि देश धर्म के लिए गौरवपूर्ण बलिदान देने वाले सिख भाइयों में कुछ लोग पूरी शक्ति से अलगाववाद को फैलाने में जुटे हैं। गुरुओं ने एक ओंकार की उपासना का सन्देश उपदेश दिया था। अलगाववाद देश व सिखों दोनों के लिए घातक है। महर्षि के जीवन में एक कन्हैयालाल जी इन्जीनियर की चर्चा मिलती है। यह ऋषि की विचारधारा से कितने प्रभावित थे-यह अलग विषय है। कन्हैयालाल पंजाब के इतिहास पर प्रामाणिक (Authority) माने जाते हैं। इतिहासज्ञ भी इस तथ्य से विशेष परिचित नहीं है। इनका लिखा पंजाब का इतिहास पंजाबी विश्वविद्यालय ने पंजाबी में छपवाया है।

मूल उर्दू ग्रन्थ की एक दुर्लभ प्रति मेरे पास है और एक श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के पास थी। कन्हैयालाल जी ने श्री महाराजा रणजीत सिंह तथा ऋषि दयानन्द दोनों के खूब दर्शन किये। महाराजा रणजीत सिंह के काल में जन्मे इस इतिहासकार ने लिखा है कि एक बार जब महाराजा रणजीत सिंह बहुत रुग्ण हुए तो आपने 'कोहनूर हीरा' जगन्नाथ पुरी के मन्दिर को दान करने का मन बनाया।[२]

यह भी लिखा है कि पंजाब से होकर अफगानिस्तान जाने वाली अंग्रेज सेना पंजाब में गो-मांस नहीं खा सकती थी। यह कठोर प्रतिबन्ध लगाया गया।[३]

महाराजा के निधन पर उनकी अस्थियाँ हरिद्वार भेजी गई थीं।[४]

महाराजा के निधन पर उनके उत्तराधिकारी उनके पुत्र ने महाराजा की छाती पर गीता को रखकर महाराजा के शरीर को स्पर्श करके गीता की शपथ खाई थी।[५]

और बातें तो फिर लिखी जायेंगी, इन चार बातों का आज तक कोई अलगाववादी निषेध नहीं कर सका। इससे यह सिद्ध हुआ कि सिख कोई अलग जाति नहीं, हिन्दू समाज का अंग है। इस इतिहास में स्पष्ट छपा है कि महाराजा का हिन्दू रीति से दाहकर्म किया गया था।

श्री राहुल जी ने कन्हैयालाल रचित महाराजा पर एक फारसी महाकाव्य हमें खोज कर दिया है। इस बृहत् काव्य को इस समय पंजाब के किसी भी इतिहासकार ने देखा व सुना तक नहीं। इस ग्रन्थ में भी गंगा में महाराजा की

अस्थियाँ ले जाना लिखा है। आर्य समाजी युवक श्री राहुल की यह अद्‌भुत खोज है। कन्हैयालाल इन्जीनियर फारसी के महाकवि थे, इस तथ्य को जानने वाला कौन बचा था? यह महाकाव्य ६०४ पृष्ठों के बड़े आकार का ग्रन्थ है। इसे हम साहित्य की भाषा में महाराजा रणजीत सिंह की रामायण कह सकते हैं। कई इतिहासज्ञों ने इसे देखने की इच्छा दिखाई है। इस ग्रन्थ का नाम 'जफर नामा रणजीतसिंह' और 'रणजीत नामा' है। अलगाववाद को उखाड़ने के लिए इससे भी लाभ उठाया जा सकता है। मुख्य बात आज लिख दी। शेष फिर लिखा जावेगा।

श्रीमान् जी, यह क्या लिख दिया ?:- बढ़ती आयु के कारण और घटती दृष्टि के कारण मैं पत्र-पत्रिकाओं के लेख कम ही पढ़ता हूँ। अत्यधिक व्यस्तता भी इसका एक कारण है। जब आर्य बन्धु किसी लेख का ध्यान दिलाते हैं तो फिर देखने का प्रयास करता हूँ। 'आर्य संकल्प' के अगस्त २०१५ के अंक में माननीय पं. उम्मेदसिंह जी का 'आर्य समाज की नींव के प्रेरणा स्रोत ऐतिहासिक महापुरुष' पढ़ा। लेखक की भावना तो अच्छी है, परन्तु आदरणीय विशारद जी ने ऋषि जीवन पर चिन्तन किये बिना यह लेख लिख डाला है। पढ़कर निराशा ही पल्ले पड़ी। दोष लेखक का नहीं। कुछ प्रोफेसर, आचार्य, लेखक महानुभाव कुछ रटे-रटाये नामों को ऋषि के साथ जोड़ कर उगलते रहते हैं। यह लेख उसी का प्रभाव है। लीजिये, संक्षेप से कुछ निवेदन करता हूँ। साहस करके सत्य को स्वीकार कीजिये । कोसना चाहें तो आप अवश्य कोसते रहिये।

आरम्भिक काल के बहुत से व्यक्ति स्वल्प काल में आर्यसमाज छोड़ गये। यह क्या पता है? फिर सदस्य संख्या व बिरादरियों के नाम देने का क्या लाभ? लाला मूलराज ने ऋषि के बार-बार लिखने पर भी **गोकरुणानिधि** का अंग्रेजी में अनुवाद करके नहीं दिया और न ही ऋषि को न कही। आर्य समाज को दो फाड़ करके सरकार की सेवा की। और बताऊँ क्या? इस मांस प्रचारक का ईश्वर व वेद में विश्वास ही नहीं था। यह ज्वाला जी की यात्रा का पुण्य लूटने गया। संख्या ३२ वाले मुंशी देवीप्रसाद क्या आर्य समाजी थे? संख्या ६ से ३२ तक में से एक-एक को जान लिया क्या?

मुंशी समर्थदान के अतिरिक्त किसी का कोई करणीय कार्य तो बता देते। संख्या ४१ पर आपने यशवन्त सिंह को रखा है। यह जोधपुर वाला देवता ही होगा? विष दिये जाने पर क्या यह पता करने आया था? आपको जो प्रेरणा प्राप्त हुई हो वह सबको बता देते तो अच्छा होता। प्रतापसिंह वही है जो ऋषि को मृत्यु के मुख में छोड़कर पूना जुआ खेलने गया था? क्या यह वही है जो विष दिये जाने के २७ दिन पश्चात् जोधपुर की सीमा से बाहर आबू ऋषि को देखने आया? यही आपका प्रेरणा स्रोत है, जिसने अपनी आत्म कथा में ऋषि के जोधपुर आगमन पर एक पंक्ति नहीं लिखी? रमाबाई ने ५०००० हिन्दू नारियों को ईसाई बनाया। इतिहास के इस तथ्य का ज्ञान है? आपको रमाबाई से क्या प्रेरणा प्राप्त हुई?

श्रीमान् जी, आपने इधर-उधर से कुछ नाम उठाकर उगल दिये। आपको ठाकुर मुकन्दसिंह, ठा. भोपालसिंह, राव बहादुरसिंह, पं. लेखराम, ब्र. नित्यानन्द, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, पं. नरेन्द्र सब भूल गये। इतिहास भी एक शास्त्र है। आपने महात्मा नारायण स्वामी, आचार्य उदयवीर से घोर अन्याय किया है। बुरा न मनाना। सच अच्छा लगे तो अपना लें।

मान्य विशारद जी, मेरे नम्र निवेदन पर गम्भीरता से विचार करिये। ऋषि के सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति उनका भक्त और वेदनिष्ठ नहीं था। उनमें कई सरकारी सेवक थे। कुछ के अपने निजी स्वार्थ थे और कुछ अन्य-अन्य संगठनों के लिये आर्य समाज व ऋषि का लाभ उठाने के लिए उनसे जुड़ गये। ऋषि के पत्र-व्यवहार से आपको सब पता चल जायेगा। महादेव गोविन्द रानडे के ग्राम मैं गया। वहाँ न तब न अब आर्य समाज था, न है। केशवचन्द्र सेन से आपको क्या प्रेरणा मिली? मोहनलाल विष्णुलाल पण्डिया पोप निकला। यह स्वामी श्रद्धानन्द जी, पं. लेखराम जी लिखते हैं।

आर्य समाज की लाज का ध्यान रहे:- कभी दिल्ली में श्री महाशय कृष्ण जी के एक वाक्य को सुनते ही वह वाक्य, वह भाव मेरे हृदय पर अंकित हो गया। महाशय जी ने कहा, ''जब जनता के बीच में जाओ तो सदा आर्यसमाज की लाज व साख का ध्यान रखा करो। हमारे बड़ों ने सतत् साधना से लहू की धार देकर ऋषि की वाटिका को सींचकर आर्य समाज की साख को बनाया। सिख मिशनरी कालेज अमृतसर में आर्यों के हृदय सम्राट महामुनि स्वतन्त्रानन्द जी का सिख मत व सिख इतिहास पर व्याख्यान हो रहा था।''

बीच में से एक युवक ने उठकर एक प्रश्न कर दिया।

इससे पहले कि हमारे पूज्य स्वामी जी उत्तर देते कालेज के प्रिंसिपल प्रसिद्ध सिख विद्वान् प्रिंसिपल गंगासिंह जी ने उठकर कहा, यह व्याख्यानमाला आठ दिन चलेगी। इसे पूरा होने दो समाप्ति पर जो प्रश्न पूछना हो पूछ लेना। स्वामी जी उत्तर देंगे। व्याख्यानमाला की समाप्ति पर महाराज ने कहा, कोई प्रश्न पूछना हो तो पूछिये। किसी ने एक भी प्रश्न नहीं किया। यह थी हमारी धाक और साख।

अब हम आर्यसमाज के इतिहास की दुर्गति करते जा रहे हैं। मेरे पास कभी एक प्रतिष्ठित आर्य विद्वान् ने २७-२-२०११ के आर्यजगत् में छपा श्री एस.पी. मल्होत्रा का एक लेख भेजा। मैं इस पर क्या लिखता? कहीं रखकर भूल गया। इसके कुछ शोध वाक्य या बिन्दु आगे पढ़िये:-

१. लाला लाजपतराय की मौत के पश्चात् हजारों लोगों के समूह का नेतृत्व करते हुए स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अंग्रेज अफसरों का डटकर सामना किया।

२. महर्षि दयानन्द की मौत के पश्चात् महात्मा हंसराज, पं. लेखराम, शहीद राजपाल, स्वामी श्रद्धानन्द आदि ने आर्य समाज का कार्य फैलाया।

३. उन्हीं दिनों सन् १८८५ में महर्षि की मृत्यु हुई।

४. गुरुदत्त को उन्हें देखने के लिए जोधपुर भेजा गया। जोधपुर जाकर गुरुदत्त ने ऋषि का चेहरा देखा।

५. शहीद पं. लेखराम का जन्म सन् १९१५ में कामिया नगर में (कादियाँ कहना चाहता है) हुआ।

६. उर्दू फारसी, इंगलिश स्कूल में सीखी।

७. पं. लेखराम सत्यार्थप्रकाश पढ़कर ऋषि के सच्चे शिष्य बने।

८. कादियाँ के हिन्दुओं को पण्डित जी ने आर्यसमाज में बुलाकर शुद्ध किया

९. पं. लेखराम जी की पीठ पर हत्यारे ने छुरे के कई वार किये।

१०. शहीद महाशय राजपाल का जन्म सन् १८४२ में अमृतसर में हुआ। आपने वहीं ऋषि के भाषण सुने।

११. आपने (महाशयजी ने) एक साप्ताहिक पत्र निकाला।

१२. स्वामी श्रद्धानन्द जी को सुनकर आप नगर-नगर व्याख्यान देते रहे।

महर्षि दयानन्द के समर्पित शिष्य:- महर्षि दयानन्द जी के पत्र-व्यवहार की समाप्ति पर दोनों भागों के साथ यदि निर्देशिका छप जाती है तो ऋषि के अनेक समर्पित शिष्य गुमनामी के गढ़े से निकल आयेंगे। यहाँ एक लाला मुरलीधर जी पर सार रूप में कुछ विशेष जानकारी दी जाती है। आप अमृतसर, गुरदासपुर, होशियारपुर आदि कई समाजों के अधिकारी रहे। महात्मा हंसराज कहा करते थे कि आपने पाँच बावालयाँ (समाजें) स्थापित की। रुड़की का समाज भी इनकी देन था। आपने अपने गुरु पं. उमराव सिंह को भी आर्य बना दिया। पं. लेखराम के विशेष भक्त और प्रादेशिक सभा के मन्त्री, शास्त्रार्थ महारथी, लेखक व शुद्धि आन्दोलन के एक कर्णधार थे।

श्री राहुल ने इतिहास रच दिया:- आर्यवीर राहुल का स्वास्थ्य पूरा ठीक नहीं रहता तथापि आप आर्यसमाज की सेवा में नये-नये कीर्तिमान रच रहे हैं। सभा के लिए सर्वथा अलभ्य साहित्य खोज-खोज कर ला रहे हैं। पं. श्रद्धाराम ने गवर्नर के कहने पर एक ग्रन्थ तैयार किया। श्रद्धाराम के नाम लेवा ही नहीं जानते। राहुल जी खोज लाये हैं। सात खण्डों के आर्यसमाज के इतिहास पर स्वामी सत्यप्रकाश जी, आचार्य श्री उदयवीर जी का मत आज क्या दोहराऊँ? लेखकों की अपने ही स्रोतों तक पहुँच नहीं थी। श्री प्रकाशचन्द्र जी पूना मुम्बई को सातों खण्डों के लेखकों ने श्री बैरिस्टर लक्ष्मी नारायण जी का भतीजा लिख दिया। मैंने यह रहस्य खोला कि लक्ष्मी नारायण जी तो साँपला (पंजाब) के थे। राहुल जी ने पुराने आर्य पत्रों के सहस्रों पृष्ठ सैकड़ों अंक खोज निकाले हैं। कुछ पत्र जिनका नाम तक श्री सत्यकेतु व उनके साथी नहीं जान पाये उनको राहुल जी खोज लाये हैं। पटियाला राजद्रोह अभियोग पर आर्य भाई कहेंगे तो एक नई पुस्तक लिख दूँगा। नये स्रोत मिल गये हैं। श्री जितेन्द्र गुप्त जी बठिण्डा से विचार विमर्श करके कार्य आरम्भ कर दिया जायेगा। ये सब स्रोत परोपकारिणी सभा को हम भेंट करते जा रहे हैं। प्रमाणों से परिपूर्ण इतिहास होगा।

सन्दर्भ

१. द्रष्टव्य- "Mission Field" February, 1879, Page 58

२. तारीखे पंजाब, पृष्ठ- ३८१ ३. वही, पृष्ठ- ३७८

४. वही, पृष्ठ- ३८३ ५. वही, पृष्ठ- ३८२

- **वेद सदन, अबोहर, पंजाब-१५२२२६**

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग—साधना शिविर

दिनांक : १२ से १९ जून, २०१६

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ-मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. मार्च,२०१६ में होने वाली **सन्ध्या गोष्ठी** स्थगित की गई है। पुन: निर्धारण होने पर सूचित किया जायेगा।

२. अप्रैल, २०१६ **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर,** सम्पर्क : ०९९५०९९९६७९ समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

३. मई, २०१६ **आर्यवीर शिविर,** सम्पर्क- ०९९५०९९९६७९

४. मई, २०१६ **संस्कृत सम्भाषण शिविर,** सम्पर्क- ०९९५०९९९६७९

५. जून, २०१६ **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९९५०९९९६७९

६. जून, २०१६- **योग-साधना शिविर (द्वितीय स्तर),** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

विशेष- परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित पूर्व दो ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण शिविरों में प्रथम व उच्च प्रथम श्रेणी प्राप्त प्रशिक्षकों के लिए भी योग साधना शिविर (द्वितीय स्तर) में भाग लेने का अवसर रहेगा।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें अन्यथा व्यक्ति के नाम से शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। परोपकारिणी सभा आप सभी का सहयोग चाहती है।

यू-ट्यूब पर वीडियो प्रवचन उपलब्ध

वेद एवं आर्ष साहित्य में रुचि रखने वाले आर्यजगत् एवं धार्मिक जनों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अब यू-ट्यूब पर अनेक वैदिक आर्य विद्वानों के सैंकड़ों नये-नये प्रवचन उपलब्ध हैं। विश्व में कहीं पर भी इन्टरनेट से जुड़ कर ये प्रवचन निःशुल्क सुने-देखे तथा डाउनलोड किये जा सकते हैं। आप जहाँ भी हैं, यदि आपको वैदिक आर्ष ज्ञान की पिपासा है, वेद एवं आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय के साथ आप इन पर विद्वानों के प्रवचन भी सुनना चाहते हैं, तो इन्टरनेट से जुड़ कर सरलता से सुन सकते हैं।

इसके लिए you tube पर जाकर playlist of paropkarini sabha लिख कर सर्च क्रें, तो आपको अनेक प्लेलिस्ट मिलेंगी, यथा- वेद प्रवचन, योग दर्शन, ईशोपनिषद् आदि। इनमें इच्छानुसार जाकर लाभ उठाया जा सकता है। आप अपने परिचितों को यह सूचना देकर उन्हें भी लाभ उठाने को प्रेरित कर सकते हैं। भविष्य में अन्य भी नये-नये प्रवचन इस सूची में उपलब्ध कराये जाते रहेंगे।

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या स ूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

जैसे मेघ वर्षा समय में अपने जल के समूह से सब पदार्थों को तृप्त करता हुआ उन्नति देता है वैसे ईश्वर भी योगाभ्यास करने वाले योगी पुरुष के योग को अत्यन्त बढ़ाता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.४०

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

प्राणोपासना

- तपेन्द्र कुमार

इस संसार में तीन नित्य पदार्थ हैं- ईश्वर, जीव व प्रकृति। प्रकृति सत्तात्मक है, जीव सत्तात्मक तथा चेतन हैं। ईश्वर सत्तात्मक, चेतन तथा आनन्दस्वरूप है। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि की रचना आत्मा के भोग तथा अपवर्ग के लिए की है। पूर्व जन्मों के प्रबल संस्कारवान् व्यक्ति ब्रह्मचर्य आश्रम से सीधे ही साधना की ओर अग्रसर हो जाते हैं तथा जिनके उतने सुदृढ़ संस्कार नहीं होते, वे गृहस्थ आश्रम आदि में संसार के भोगों में दु:ख मिश्रित सुख का अनुभव करके साधना का मार्ग अपनाते हैं। जीव स्वभावत: आनन्द चाहता है तथा आनन्द केवल परम पिता परमात्मा में है, अत: परमात्मा की उपासना करके ही आनन्द को प्राप्त किया जा सकता है। परमपिता परमात्मा को प्राप्त करने के कई साधन तथा प्रक्रियाएँ संसार में प्रचलित है, उनसे मन की कुछ एकाग्रता भी सम्भव है, परन्तु सीधा व सही मार्ग तो वेदसम्मत मार्ग ही है।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका के उपासना विषय में मुण्डकोपनिषद् का सन्दर्भ देते हुए लिखा है-

तप: श्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये शान्ता विद्वांसो भैक्ष्यचर्य्यां चरन्त:।
सूर्यद्वारेण ते विरजा: प्रयान्ति यत्रामृत: स पुरुषो ह्यव्यात्मा।

- मुण्डक. ख. २ मं.।।

''(तप: श्रद्धे.) जो मनुष्य धर्माचरण से परमेश्वर एवं उसकी आज्ञा में अत्यन्त प्रेम करके अरण्य अर्थात् शुद्ध हृदयरूपी वन में स्थिरता के साथ निवास करते हैं, वे परमेश्वर के समीप वास करते हैं। जो लोग अधर्म के छोड़ने और धर्म के करने में दृढ़ तथा वेदादि सत्य विद्याओं में विद्वान् हैं, जो भिक्षाचर्य्य आदि कर्म करके संन्यास वा किसी अन्य आश्रम में हैं, इस प्रकार के गुण वाले मनुष्य प्राणद्वार से परमेश्वर के सत्य राज्य में प्रवेश करके (विरजा:) अर्थात् सब दोषों से छूट के परमानन्द मोक्ष को प्राप्त होते हैं, जहाँ कि पूर्ण पुरुष सबमें भरपूर, सबसे सूक्ष्म (अमृत:) अर्थात् अविनाशी और जिसमें हानि-लाभ कभी नहीं होता, ऐसे परमेश्वर को प्राप्त होके, सदा आनन्द में रहते हैं।'' **पुञ्जन्ति ब्रह्ममरुषं चरन्तं परितस्थुष:। रोचन्ते रोचना दिवि।।**(ऋग्वेद १, १, ११, ९) का अर्थ करते हुए महर्षि लिखते हैं- ''सब पदार्थों की सिद्धि का मुख्य हेतु जो प्राण है, उसको प्राणायाम की रीति से अत्यन्त प्रीति के साथ परमात्मा में युक्त करते हैं। इसी कारण वे लोग मोक्ष को प्राप्त होके सदा आनन्द में रहते हैं।'' **सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वितन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नया।।** (यजु. १२.६७) की संस्कृत व्याख्या में महर्षि स्पष्ट करते हैं- ''**(सीरा:) योगाभ्यासोपासनार्थं नाडीर्युञ्जन्ति, अर्थात् तासु परमात्मानं ज्ञातुमभ्यस्यन्ति.....(सुम्नया) सुखेनैव स्थित्वा परमानन्दं (युञ्जन्ति) प्राप्नुवन्तीत्यर्थ:।**'' पुनक्त **सीरा वि युगा तनुध्वं....** यजु. १२.६८ के भाषार्थ में महर्षि लिखते हैं कि.... हे उपासक लोगो! तुम योगाभ्यास तथा परमात्मा के योग से नाड़ियों में ध्यान करके परमानन्द को (वितनुध्वं) विस्तार करो।

इस प्रकार महर्षि ने स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है कि प्राणद्वार से परमेश्वर को प्राप्त किया जा सकता है, प्राणनाड़ियों में ध्यान करके परमानन्द की प्राप्ति की जा सकती है, प्राण को परमात्मा में युक्त करके मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। प्राण नाड़ियों में ही परमात्मा को जानने प्राप्त करने का अभ्यास करणीय है।

परमेश्वर की उपासना करके उसमें प्रवेश करने की रीति भी महर्षि दयानन्द जी महाराज ने उपासना विषय में ही स्पष्टत: प्रतिपादित की है- ''(अथ यदिद.) कण्ठ के नीचे, दोनों स्तनों के बीच में और उदर के ऊपर जो हृदय देश है, जिसको ब्रह्मपुर अर्थात् परमेश्वर का नगर कहते हैं, उसके बीच में जो गर्त है, उसमें कमल के आकार का वेश्म अर्थात् अवकाश रूप एक स्थान है और उसके बीच में जो सर्वशक्तिमान् परमात्मा बाहर-भीतर एकरस होकर भर रहा है, वह आनन्दस्वरूप परमेश्वर उसी प्रकाशित स्थान के बीच में खोज करने से मिल जाता है। दूसरा उसके मिलने का कोई उत्तम स्थान वा मार्ग नहीं है।'' इस प्रकार स्पष्ट उल्लेख है कि हृदय देश में परमेश्वर की प्राप्ति/

दर्शन होते हैं, उस परमपिता परमात्मा के मिलने का कोई दूसरा उत्तम स्थान व मार्ग नहीं है।

उपासना विषय के ऊपर उद्‌धृत उद्‌धरणों में तीन शब्द विशेषत: आये हैं- प्राण, प्राणनाड़ियाँ तथा हृदय। अत: इन तीनों पर मनन किया जाना समीचीन होगा।

प्राण अचेतन एवं भौतिक तत्त्व है। प्राण जीवात्मा के साथ संयुक्त होकर सब चेष्टा आदि व्यवहारों को सिद्ध करता है तथा समस्त शरीर को धारण करता है। प्राण हवा या गैस नहीं है। प्राण विशिष्ट प्रकार की शुद्ध ऊर्जा है।[१] **आत्मनः एष प्राणो जायते। यथैषा पुरुषे छायेतस्मिन् नेतदाततं मनोकृतेनाऽऽयात्यस्मिं शरीरे।** प्रश्न. ३.३। प्राण की उत्पत्ति आत्मा से होती है जैसे पुरुष के साथ छाया लगी है, इसी प्रकार आत्मा के साथ प्राण लगा है।

अव दिवस्तारयन्ति सप्त सूर्यस्य रश्मयः।
आपः समुद्रियाधारास्तास्ते शल्यमस्रिस्रसन्।।

-अथर्ववेद ७.१०.७.१

सूर्य की सात किरणें आकाश से अन्तरिक्ष में रहने वाले धारा रूप प्राणों को उतारती हैं। प्रश्नोपनिषद् १-६ के अनुसार-

अथादित्य उदयन्यत्प्राचीं दिशं प्रविशति तेन प्राच्यान् प्राणान् रश्मिषु संनिधत्ते..... यत् सर्वं प्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषु सन्निधत्ते।

जिस समय सूर्य उदय होकर पूर्व दिशा में प्रवेश करता है तो उसके द्वारा पूर्व दिशा में प्राणों को अपनी किरणों के अन्दर सम्यक् रूप से निरन्तर धारण करता है..... उन सभी दिशाओं में प्राणों को अपनी किरणों के अन्दर सम्यक् रूप से निरन्तर धारण करता हुआ प्रकाशित होता है।

आदित्यो ह वै बाह्य,
प्राण उदयत्येष हनेन चाक्षुषं प्राणमनुगृह्णनः।

- प्रश्नो. ३.८

निश्चय ही आदित्य ही बाह्य प्राण है, यह चाक्षुष प्राण पर अनुग्रह करता हुआ उदित होता है। इस प्रकार सूर्य की प्रकाश किरणों के अन्दर रखे हुए तथा किरणों के माध्यम से ऊर्जाकण निरन्तर प्राप्त हो रहे हैं, वे बाह्य प्राण हैं। छान्दोग्य. ६.५.२ के अनुसार-

आपः पीतास्त्रेधा विधीयन्ते तासां यः स्थविष्ठो धातुस्तन्मूत्रं भवति यो मध्यमस्तल्लोहितं योऽणिष्ठः स प्राणः।।

आहार के द्वारा जीवों के शरीरों में पाचन क्रिया द्वारा जल का अणुतम भाग प्राण रूपी ऊर्जा में परिणत हो जाता है।

प्राण जीवों को दो तरह से प्राप्त होता है, एक बाह्य प्राण कहलाता है, जो सूर्य रश्मियों से प्राप्त होता है तथा सर्वत्र व्याप्त है। यह जीवों के नेत्रों द्वारा प्राप्त होता है। दूसरा जठराग्नि द्वारा जल से उत्पन्न प्राण ऊपर उठकर हृदय में बाह्य प्राण से मिल जाता है। हृदय शरीरों में प्राण का केन्द्र है।

प्राणनाड़ियों के सम्बन्ध में उपनिषदों में स्पष्ट प्रमाण है। प्रश्नोपनिषद् प्रश्न ३/६-

हृदि ह्येष आत्मा। अत्रैतदेकशतं नाडीनां तासां शतं शतमेकैकस्यां द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः प्रतिशाखानाडीसहस्राणि भवन्त्यासु व्यानश्चरति।

- कठोपनिषद् षष्ठ वल्ली १६

शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तानासां मूर्धनमभिनिःसृतैका। तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति विश्वङ्ङन्या उत्क्रमणे भवन्ति।।

......यदेतदन्तहृदये जालकमिवाथैनयोरेषा सृतिः संचरणी यैषा हृदयादूर्ध्वा नाड्युच्चरति यथा केशः सहस्रधा भिन्न एवमस्यैता हिता नाम नाड्योऽन्तर्हृदये प्रतिष्ठिता भवन्त्येताभिर्वा एतदास्रवदास्रवति.....।

- बृहदारण्यक ४.२.३

उपनिषदों के ऊपरलिखित कुछेक प्रमाणों से स्पष्ट है, हृदय में एक सौ एक नाड़ियाँ हैं, इनमें से एक नाड़ी मूर्धा को वेधकर कपाल शीर्ष तक गई है, बृहदारण्यक उपनिषद् में इस नाड़ी को संचरणी कहा गया है। शेष सौ नाड़ियों का नाम हिता है। इन सौ हिता प्राण-नाड़ियों से प्रत्येक से एक सौ और भी सूक्ष्म उपनाड़ियाँ निकलती हैं। प्रत्येक उपनाड़ी से भी और भी सूक्ष्म बहत्तर-बहत्तर हजार उप-उपप्राण नाड़ियाँ निकलती हैं। हृदय से निकली हुई ये प्राणनाड़ि सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो रही हैं। इन नाड़ियों को पुरीव प्राणनाड़ियाँ कहा जाता है। हिता नाड़ियों की मोटाई बाल के हजारवें हिस्से जितनी है, अर्थात् ये प्राणनाड़ियाँ बहु सूक्ष्म हैं।

स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेवं निरुक्त

हृदयामिति। छान्दो. ८.३.३ के अनुसार देह में जीवात्मा का मुख्यालय हृदय है जो एक गुह्य रहस्यमय स्थान है। यह शरीर का स्थूल इन्द्रिय नहीं है। यह रक्तप्रेषण करने वाला हृदय भी नहीं है। यह हृदय गुहा, ब्रह्मपुर, दहर, परमव्योम आदि नामों से भी कहा गया है। मनुष्य के शरीर में छाती के बीच में अंगुष्ठमात्र परिणाम वाला गड्ढा-सा है, जिसमें व्योम=आकाश है। यह हृदय हिता नामक प्राणनाडियों से बना हुआ है। बृहदारण्यक ४.२.४ के अनुसार हृदय में सब ओर प्राण ही प्राण हैं। छान्दोग्य उपनिषद् ३.१४.३ **एष म आत्मा अन्तर्हृदयेऽणीयान् व्रीहेर्वा.....** से स्पष्ट है कि आत्मा का स्थान हृदय है।

अरा इव रथनाभौ संहता यत्र नाड्यः। स एषोऽन्तश्चरते बहुधा जायमानः। ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानं स्वस्ति वः पाराय तमसः परस्तात्।।

- मुण्डक. २.२.६

जैसे भिन्न-भिन्न अरे रथ की नाभि में जुड़े होते हैं, वैसे भिन्न-भिन्न नाड़ियाँ हृदय में संहत हो जाती है। अनेक रूपों में प्रकट होने वाला विराट् पुरुष हृदय के भीतर ही विचरता है।

दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येष व्योम्नि आत्मा प्रतिष्ठितः।

मुण्डक २.२.७ के अनुसार यह दिव्य आत्मा ब्रह्मपुर-ब्रह्म की नगरी-हृदयाकाश रूपी ब्रह्मपुर में स्थित है। शंकराचार्य उक्त की व्याख्या करते हुए लिखते हैं-

............पुरं हृदयपुण्डरीकं तस्मिन्यद्व्योम तस्मिन् व्योम्न्याकाशे हृत्पुण्डरीकं मध्यस्थे, प्रतिष्ठित इवोपलभ्यते।

....हृदय कमल ब्रह्मपुर है, उसमें जो आकाश है, उस हृदयपुण्डरीकान्तर्गत आकाश में प्रतिष्ठित (स्थित) हुआ-सा उपलब्ध होता है।

अणोरणीयान् महतो महीयानात्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम्।

-कठो. २.२०

जो व्यक्ति प्राणी के हृदय-गुहा में-स्थित सूक्ष्मातिसूक्ष्म तथा महान् से महान् परमेश्वर को देख पाता है.....।

अंगुष्ठमात्रः पुरुषो मध्य आत्मनि तिष्ठति। ईशानो भूतभाव्यस्य न ततो विजुगुप्सते। एतद्वैतत्।। -कठो. ४.१२। हुए और होने वाले जगत् का अध्यक्ष पूर्ण परमात्मा अँगूठे के बराबर हृदयाकाश में रहने वाले जीवात्मा के मध्य में रहता है, उसके ज्ञान से कोई ग्लानि को नहीं पाता. यही वह ब्रह्म है।[२]

**प्राणैश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानाम्
यस्मिन्विशुद्धे विभवत्येष आत्मा।**

-मुण्डक. ३.१.९

सभी जीवों के चित्त प्राणों से ओतप्रोत हैं, उन्हीं प्राणों में यह आत्मा विशुद्ध रूप से प्रकाशित होता है।

स वा एष महानज आत्मा योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु य एषोऽन्तर्हृदय आकाशस्तस्मिञ्छेते।

- बृहद. ४.४.२२

यह महान् तथा अजन्मा आत्मा विज्ञानमय है, प्राणों में रहता है और हृदय के भीतर जो आकाश है, उसमें विश्राम करता है।[३]

स यथा शकुनिः प्रबद्धो दिशं दिशं पतित्वान्यत्रायतनमलब्ध्वा बन्धनमेवोपश्रयत एवमेव खलु सोम्य तन्मनो दिशं दिशं पतित्वान्यत्रायतनमलब्ध्वा प्राणमेवोपाश्रयते प्राणबन्धनं हि सौम्य मन इति।

- छान्दोग्य. ६.८.२

जिस प्रकार डोरी से बँधा हुआ पक्षी दिशा विदिशाओं में उड़कर अन्यत्र स्थान न मिलने पर बन्धन स्थान का ही आश्रय लेता है, इसी प्रकार यह मन दिशा-विदिशाओं में उड़कर अन्यत्र स्थान न मिलने से प्राण का ही आश्रय लेता है, क्योंकि मन प्राणरूप बन्धनवाला ही है।

इस प्रकार प्राण अचेतन ऊर्जा है, बाह्यप्राण सूर्य से व अन्तःप्राण भुक्त जल से प्राप्त होता है। हृदय प्राण का केन्द्र है, प्राणों में आत्मा प्रतिष्ठित है तथा परमात्मा हृदयाकाश में रहने वाले जीवात्मा के मध्य रहता है। अतः प्राणों में उपासना करके आत्मा तथा परमात्मा का साक्षात्कार या दर्शन किया जा सकता है, जो मानव जीवन का परम पुरुषार्थ है।

सन्दर्भ

१. ब्रह्मोपासना और उसका विज्ञान- स्वामी सत्यबोध सरस्वती

२. महात्मा नारायण स्वामी जी भाष्य

- ५३/२०३, मानसरोवर, जयपुर, राज.

वैदिक पुस्तकालय के प्रकाशन

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत

वेदभाष्य, वेदभाषाभाष्य, मूलवेद, वेदांगप्रकाश और वैदिक साहित्य

पिछले अंक का शेष भाग.......

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
८८.	सौवर	५.००
८९.	पारिभाषिक	२०.००
९०.	धातुपाठ	
९१.	गणपाठ	२०.००
९२.	उणादिकोष	
९३.	निघण्टु	१५.००
९४.	संस्कृतवाक्यप्रबोध	
९५.	व्यवहारभानुः	२०.००
९६.	निरुक्त (मूल)	८०.००
९७.	अष्टाध्यायी (मूल)	२०.००
९८.	अष्टाध्यायीभाष्य प्रथम भाग सजिल्द	१२०.००
९९.	अष्टाध्यायी भाष्य द्वितीय भाग सजिल्द	१००.००
१००.	अष्टाध्यायी भाष्य तृतीय भाग सजिल्द	१३०.००

डॉ. भवानीलाल भारतीय

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
१०१.	महर्षि दयानन्द– आत्मकथा	
१०२.	उपदेश मंजरी (पूना प्रवचन)	
१०३.	परोपकारिणी सभा का इतिहास	
१०४.	आर्यसमाज के पत्र और पत्रकार	१०.००
१०५.	आर्य नरेश राजाधिराज सर नाहरसिंह वर्मा	८.००
१०६.	दयानन्द–सूक्ति–मुक्तावली	१५.००
१०७.	देशभक्त कुँ.चाँदकरण शारदा	५.००
१०८.	दयानन्द वचनामृत	३.००
१०९.	आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी	१०.००

वेदगोष्ठी– सम्पादक डॉ. धर्मवीर

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
११०.	ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	२०.००
१११.	वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग	३१.००
११२.	अथर्ववेदः समस्याएं और समाधान	३५.००
११३.	वेद और विदेशी विद्वान् – कृतित्व और दृष्टिभेद	३५.००
११४.	वेदों के आख्यान (प्रथम भाग)	३५.००
११५.	वेदों के दार्शनिक विचार	४०.००
११६.	सोम का वैदिक स्वरुप	५०.००
११७.	पर्यावरण का वैदिक स्वरुप	
११८.	वेद और समाज	
११९.	वेद और राष्ट्र	
१२०.	वेद और विज्ञान	
१२१.	वेद और ज्योतिष	८०.००
१२२.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–१)	५०.००
१२३.	वेदों में पदार्थ विद्या (विशेषांक–२)	५०.००
१२४.	वेद और निरुक्त	१००.००
१२५.	वेद और इतिहास	१००.००
१२६.	वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	१००.००
१२७.	वेद और शिल्प	
१२८.	वेदों में अध्यात्म	
१२९.	वेदों में राजनैतिक विचार	१००.००
१३०.	वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है	
१३१.	वैदिक समाज विज्ञान	
१३२.	सत्यार्थ प्रकाश ७वाँ समुल्लास और वेद	
१३३.	सत्यार्थ प्रकाश ८वाँ समुल्लास और वेद	

प्रो. धर्मवीर

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
१३४.	आर्यसमाज और शोध	१५.००
१३५.	महर्षि दयानन्द सरस्वती के पत्र	

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
	स्वामी विष्वङ् परिव्राजक	
१३६.	ध्यान योग एवं रोग निवारण	१५०.००
१३७.	योग	५०.००
१३८.	अष्टाङ्ग योग	२०.००
१३९.	समाधि	१००.००
	स्वामी अभयानन्द सरस्वती	
१४०.	प्राणायाम चिकित्सा	
	डॉ. सत्यदेव आर्य	
१४१.	वैदिक सन्ध्या मीमांसा	२५.००
१४२.	ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना मन्त्रों का विवेचन	२५.००
१४३.	तन्मेमनःशिवसंकल्पमस्तु का वैज्ञानिक विवेचन	२५.००
	विरजानन्द दैवकरणि	
१४४.	प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत	८.००
१४५.	महाभारत युद्ध कब हुआ एवं अन्य रचनाएँ	५.००
	वैद्य पंडित ब्रह्मानन्द त्रिपाठी	
१४६.	बूंदी शास्त्रार्थ	५.००
१४७.	वैदिक सूक्ति–सुमन	२५.००
	वैदिक साहित्य – विविध ग्रन्थ	
१४८.	दयानन्द ग्रन्थमाला तीन खंड का १ सेट	५५०.००
१४९.	आर्य समाज की मान्यताएं	२०.००
१५०.	मानव निर्माण के स्वर्ण सूत्र	१५.००
१५१.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका (सजिल्द)	२५.००
१५२.	अथर्ववेदीय पञ्चपटलिका अजिल्द	१५.००
१५३.	ऋग्वेद का नमूना भाष्य (१मंत्र)	४.००
१५४.	ईशादिदशोपनिषद् (मूल)	१०.००
१५५.	वैदिक कोषः (निघण्टु मणिमाला)	२५.००
१५६.	सरस्वती की खोज एवं महाभारत युद्धकाल	१०.००
१५७.	दयानन्द दिव्य दर्शन	१२.००
१५८.	वृक्षों में जीवात्मा	१०.००

क्रमांक	नाम पुस्तक	मूल्य
१५९.	महर्षि दयानन्द जीवन और सन्देश	३.००
१६०.	महर्षि महिमा	२.००
१६१.	स्वामी दयानन्द चरितम्	१०.००
१६२.	ब्रह्माकुमारी मत खण्डन	८.००
१६३.	निरुक्तकार का ऐतिहासिक पक्ष	५.००
१६४.	मांसाहार– वैदिक धर्म एवं विज्ञान	१२.००
१६५.	नेपाली सत्यार्थ प्रकाश	२००.००
१६६.	परोपकारी विशेषांक	२५.००
१६७.	महर्षि दयानन्द के चित्र (एक प्रति)	५०.००
१६८.	संगठन सूक्त	२.००
१६९.	३१ दिवसीय टेबल कलेण्डर	१००.००
१७०.	प्यारा ऋषि	२५.००
१७१.	नककटा चोर	३०.००
१७२.	महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी	३५.००
१७३.	स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनके क्रान्तिकारी शिष्य	३५.००
१७४.	भगवान् को क्यों मानें ?	२५.००
१७५.	महर्षि दयानन्द ग्रन्थ परिचय	३०.००
१७६.	आर्यसमाज के संस्थापक, महान समाज सुधारक–महर्षि दयानन्द सरस्वती	२५.००
१७७.	शेख चिल्ली और लाल बुझक्कड़	२५.००
१७८.	नैति मंजूषा	९५०.००
१७९.	ऋग्वेदादि संदेश	३०.००
१८०.	त्याग की धरोहर	१००.००
	ध्यान योग एवं रोग निवारण (सी.डी.)	
	(स्वामी विष्वङ् परिव्राजक)	
१८१.	अष्टांग योग–१ (सी.डी.)	४०.००
१८२.	अष्टांग योग–२ (सी.डी.)	४०.००
१८३.	आसन (सी.डी.)	४०.००
१८४.	सूक्ष्म व्यायाम (सी.डी.)	४०.००

शेष भाग अगले अंक में.......

अध्ययन और अध्यापन की ऋषि निर्दिष्ट विधि

- स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

(लेखक आर्य जगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् थे। सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास के सन्दर्भ में उनके विचार आज भी उतने ही समीचीन हैं। यह लेख लगभग ५ दशक पूर्व का है।) - **सम्पादक**

सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में ऋषि ने इतनी बात कही है-

(१) सच्चा आभूषण विद्या है, वे ही सच्चे माता-पिता और आचार्य हैं, जो इन आभूषणों से सन्तान को सजाते हैं।

(२) आठ वर्ष के हों, तब ही लड़के-लड़कियों को पाठशाला में भेज देना चाहिए।

(३) द्विज अपने घर में लड़के-लड़कियों का यज्ञोपवीत और कन्याओं का भी यथायोग्य संस्कार करके आचार्य कुल में भेज दें।

(४) लड़के-लड़कियों की पाठशाला एक दूसरे से दूर हो तथा लड़कों की पाठशाला में लड़के अध्यापक हों, लड़कियों की पाठशाला में सब स्त्री अध्यापिका हों, पाठशाला नगर से दूर हो।

(५) सबके तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन हों।

(६) सन्तान माता-पिता से तथा माता-पिता सन्तान से न मिलें, जिससे संसारी चिन्ता से रहित होकर केवल विद्या पढ़ने की चिन्ता रक्खें।

(७) राजनियम तथा जातिनियम होना चाहिए कि पाँचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के-लड़कियों को घर में न रख सके।

(८) प्रथम लड़के का यज्ञोपवीत घर पर हो, दूसरा पाठशाला में आचार्य कुल में हो।

(९) इस प्रकार गायत्री मंत्र का उपदेश करके सन्ध्योपासन की जो स्नान, आचमन, प्राणायामादि क्रिया है, सिखावें।

(१०) प्राणायाम सिखावें, जिससे बल, पराक्रम जितेन्द्रियता व सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझ कर उपस्थित कर लेगा, स्त्री भी इसी प्रकार योगाभ्यास करें।

(११) भोजन, छादन, बैठने, उठने, बोलने-चालने, छोटे से व्यवहार करने का उपदेश करें।

(१२) गायत्री मन्त्र का उच्चारण,अर्थ-ज्ञान और उसके अनुसार अपने चाल-चलन को करें, परन्तु यह जप मन से करना उचित है।

(१३) सन्ध्योपासन जिसको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं, दूसरा देवयज्ञ जो अग्निहोत्र और विद्वानों के संग, सेवादि से होता है। संध्या और अग्निहोत्र सायं-प्रात: दो ही काल में करें। ब्रह्मचर्य में केवल ब्रह्मयज्ञ और अग्निहोत्र ही करना होता है।

(१४) ब्राह्मण, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य का उपनयन करे, क्षत्रिय दो का, वैश्य एक का, शूद्र पढ़े, किन्तु उसका उपनयन न करें, यह मत अनेक आचार्यों का है।

(१५) पुरुष न्यून से न्यून २५ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी रहे, मध्यम ब्रह्मचर्य ४४ वर्ष पर्यन्त तथा उत्कृष्ट ४८ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य रक्खे।

जो (स्त्री-पुरुष) मरण पर्यन्त विवाह करना ही न चाहे तथा वे मरण पर्यन्त ब्रह्मचारी रह सकते हों तो भले ही रहें, परन्तु यह बड़ा कठिन काम है।

(१६) ब्राह्मण भी अपना कल्याण चाहें तो क्षत्रियादि को वेदादि सत्यशास्त्रों का अभ्यास अधिक प्रयत्न से करावें।

क्योंकि -

क्षत्रियादि को नियम में चलाने वाले ब्राह्मण और संन्यासी तथा ब्राह्मण और संन्यासी को सुनियम में चलाने वाले क्षत्रियादि होते हैं।

(१७) पाठविधि व्याकरण को पढ़ के यास्कमुनिकृत निघण्टु और निरुक्त छ: वा आठ महीने में सार्थक पढ़ें, इत्यादि।

(१८) ब्राह्मणी और क्षत्रिया को सब विद्या, वैश्या को व्यवहार-क्रिया और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या पढ़नी चाहिए। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म्म और व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिये, वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म्म, वैद्यक, गणित, शिल्प-विद्या तो

अवश्य ही सीखनी चाहिये।

इन १८ सूत्रों को मैं तृतीय समुल्लास के १८ अंग कहूँगा और अति संक्षेप से इसमें दिये हुए बीजों को अंकुरित करने का प्रयास ही किया जा सकता है और वही किया जायगा।

प्रथम यदि इन पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार करें तो इनका विभाग इस प्रकार है-

प्रथम दो अंग माता-पिता के प्रति उपदेश हैं। तीसरा जाति-नियम द्वारा गुरु शिष्य के सामीप्य का समर्थक है। चौथा शिक्षा-शास्त्र-सम्बन्धी नियम है जो ब्रह्मचर्य की रक्षार्थ है। पाँचवाँ बच्चों में समानता तथा सरल जीवन का आधार है। छठा शिक्षा-शास्त्र-सम्बन्धी नियम है जो निश्चितता उत्पन्न करके गुरु-शिष्य की सामीप्य की पुष्टि करता है। सातवाँ राजनियम तथा जातिनियम द्वारा मोह का निराकरण तथा गुरु-शिष्य के सामीप्य का स्तम्भ रूप है। आठवाँ सामाजिक नियम द्वारा गुरु-शिष्य के सामीप्य का पोषक है। नवाँ संध्योपासन द्वारा ईश्वराधीनता का अर्थात् सच्ची स्वाधीनता का शिक्षा में प्रवेश कराना है। दसवाँ तथा ११वाँ बच्चों को सच्ची दिनचर्या द्वारा संयम सिखाना है। १२वाँ विनीत भाव सिखा कर संयम की पुष्टि करता है। १३वाँ १४वाँ भी संकल्प अथवा व्रत द्वारा संयम का सच्चा रूप उपस्थित करता है। १५वाँ भी ब्रह्मचर्य न्यून से न्यून कितना हो यह बता कर संयम को व्यावहारिक रूप देता है। १६वें सूत्र में ब्राह्मण तथा क्षत्रियादि का परस्पर नियन्त्रण है। १७वें सूत्र में व्रतचर्या के लिए समय कैसे मिले, इसलिए आनुपूर्वी नाम का शिक्षा शास्त्र का महान् रहस्य दिया गया है, यथा १८वें में चारों वेदों के अध्ययन की लम्बी पाठविधि को यथायोग्य रूप से हर ब्रह्मचारी के बलाबल को देखकर पाठविधि कैसे बनाई जाय- इसकी कुञ्जी दी गई है।

शिक्षा का उद्देश्य

इस प्रकार इन अठारह अङ्गों के परस्पर सम्बन्ध की रूपरेखा देकर हम इन पर दार्शनिक विवेचन आरम्भ करते हैं। सबसे प्रथम यह देखना है कि शिक्षा का उद्देश्य क्या है। ऋषि ने शिक्षा का उद्देश्य भर्तृहरि महाराज के "**विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः**" इस श्लोक का उद्धरण देकर किया है। श्लोक का अनुवाद ऋषि के ही शब्दों में इस प्रकार है-

जिन पुरुषों का मन विद्या के विलास में मग्न रहता, सुन्दरशील स्वभावयुक्त सत्यभाषणादि नियम पालन युक्त और जो अभिमान अपवित्रता से रहित अन्य की मलिनता के नाशक सत्योपदेश और विद्या दान से संसारी जनों के दु:खों को दूर करने वाले वेदविहित कर्मों से पराये उपकार करने में लगे रहते हैं, वे नर और नारी धन्य हैं।

बस इस प्रकार के धन्य पुरुष उत्पन्न करना शिक्षा का उद्देश्य है।

भर्तृहरि की खान, ऋषि दयानन्द-सा जौहरी, क्या रत्न ढूँढकर निकाला है!

पहला ही शब्द ले लीजिये- विद्याविलासमनसः। हमें छात्रों को ब्रह्मचारी बनाना है। ब्रह्चारी के दो ही भोजन हैं, एक विद्या, दूसरा परमात्मा। इस भोजन को कभी-कभी खा लेने से वह ब्रह्मचारी नहीं बन सकता। जिस प्रकार विलासी मनुष्य यदि वह भोजन का विलासी है, तो उसमें नए से नए रुचिकर व्यञ्जनों का आविष्कार करता रहता है, यदि रूप का विलासी है तो नए से नए शृङ्गारों का आविष्कार करने में ही उसका मन लगा रहता है, उसी प्रकार जब विद्या उसके लिए एक विलास की वस्तु बन जाय, तब ही तो वह ब्रह्मचारी बन सकेगा। परन्तु यह विद्या में रति बिना शील शिक्षा के नहीं प्राप्त हो सकती। शील शिक्षा भी वह जो पूर्णतया धारण कर ली गई हो, अडिग हो, अविचल हो। इसके लिए उसका व्रत धारण करना आवश्यक है। परन्तु ब्राह्मण व क्षत्रियादि के व्रत निश्चल तब ही हो सकते हैं, जब वह सत्य व्रत हों, यह व्रतपरायणता बिना अभिमान दूर किये नहीं हो सकती और अभिमान की परम चिकित्सा है प्रभु भक्ति, वह अभिमान ही नहीं और सब मलों को भी दूर करने वाली है। इस भक्ति का आरम्भ होता है- संसार के दु:ख दूर करने में ही गौरव मानने से। दु:ख दूर करने से तो भक्ति का मार्ग आरम्भ होता है, परन्तु उसका पूर्ण चमत्कार तो दु:ख दूर करके सच्चा सुख प्राप्त कराने से होता है । यही सबसे बड़ा परोपकार है।

परन्तु दु:खों का निराकरण तथा सच्चे सुख की प्राप्ति का उपाय जाना जाता है वेद से। उसी ने इसका विधान

किया है। वेदविहित कर्मों का ठीक ज्ञान न होने से अज्ञानी मनुष्य परोपकार की भावना से प्रेरित होकर भी अपकार ही तो करेगा, इसलिये विहित कर्मों से ही परोपकार होता है। चलो इन विहित कर्मों के ज्ञान के लिए वेद-वेदाङ्ग का ज्ञान प्राप्त करें। यही शिक्षा का आरम्भ है, इसीलिए कहा-

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः,
संसारदुःखदलनेन सुभुषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्मपरोपकाराः।।

इस प्रकार के धन्य मनुष्य इस प्रकार के गुरु के पास पहुँचे बिना कैसे प्राप्त हो सकते हैं! इसलिए माता-पिता को उपदेश दिया (१) सांसारिक आभूषणों के मोह को तथा उसके मूल सन्तान के मोह को छोड़ो, सन्तान से प्रेम करना सीखो। यहाँ सबसे पहले मोह और प्रेम में भेद करना सीखना है। अनुराग के दो अङ्ग हैं- **हितसन्निकर्षयोरिच्छानुरागः।** इनमें सन्निकर्ष अर्थात् प्रेमपात्र के वियोग को न सहन करना तथा समीप होने की इच्छा जितनी प्रबल होती जायगी, उतना ही अनुराग प्रेम की ओर उठता जायगा। यदि सन्निकर्षेच्छा न हो तो माता बच्चे के लिए रातों जाग नहीं सकती, परन्तु हितेच्छा न हो तो गुरुकुल नहीं भेज सकती। इसीलिए कहा कि पाँचवें वर्ष तक सन्निकर्षेच्छा समाप्त हो ही जानी चाहिए। यदि सन्तान की दुर्बलता आदि किसी अन्य कारण से सन्तान का माता-पिता के पास रहना आवश्यक भी हो तो ८ वें वर्ष तक तो राजनियम से बच्चे को माता-पिता से पृथक् कर ही देना चाहिए। यही नहीं, गुरु के पा जाने पर मोहवृद्धि कारक माता-पिता का मिलना तथा पत्र-व्यवहार आदि भी बन्द हों, जिससे गुरु शिष्य में वह सामीप्य उत्पन्न हो जाय, जिसका वेद ने इन शब्दों में वर्णन किया है-

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणाम् कृणुते गर्भमन्तः।

- अथर्व. ११काण्ड

हमें विद्यार्थियों को न्याय सिखाना है, इसलिये सबसे पहले उनके साथ न्याय होना चाहिये। न्याय के दो सिरे हैं, निर्णय के पूर्व समान व्यवहार, निर्णय के पश्चात् यथायोग्य व्यवहार । शिक्षा के आरम्भ-काल में निर्णय नहीं हो सकता। इसलिए उस काल में सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान, आसन दिये जावें। इस प्रकार सच्ची समानता उत्पन्न की गई है।

यह समानता दो प्रकार से उत्पन्न की जा सकती है। एक नाना प्रकार के ऐश्वर्य की सामग्री सबको देकर, दूसरे सबको तपस्वी बनाकर । राजा के पुत्र को अपरिग्रही के समान रखकर अथवा परिग्रही को राज-तुल्य वैभव देकर। परन्तु ब्रह्मचर्य जिनकी शिक्षा का आधार है, वे सरलता द्वारा ही समानता उत्पन्न करेंगे, इसलिये तप तथा अपरिग्रह की शिक्षा दी गई है।

शिक्षा का तीसरा आधार स्वाधीनता है, परन्तु स्वाधीनता वस्तुतः ईश्वराधीनता से प्राप्त होती है। जो अपने-आपको ईश्वर के अधीन कर देता है, वह फिर न प्रकृति के अधीन होता है न विषयों के। जिस प्रकार स्वेच्छापूर्वक स्वयं चुने हुए विमान पर चढ़ने से मनुष्य की गति में तीव्रता तो अवश्य आ जाती है। इसी प्रकार स्वेच्छापूर्वक प्रभु समर्पण द्वारा मनुष्य अनन्त शक्ति का स्वामी तो हो जाता है, परन्तु पराधीन नहीं होता, इसीलिये ऋषि दयानन्द ने इस समुल्लास में शिक्षा का आरम्भ सन्ध्योपासन से किया है। इसी प्रकार देवयज्ञ की व्याख्या में उन्होंने देवयज्ञ के दो रूप दिये हैं- एक अग्निहोत्र, दूसरा विद्वानों का संगसेवादि। गुरु के तथा विद्वानों के संग-सेवादि से मनुष्य स्व को पहिचानता है। जिसने स्व को ही नहीं पहिचाना, वह स्वाधीन क्या होगा? स्वाधीन शब्द का दूसरा अर्थ आत्मीयों की अधीनता है। जीव का सबसे बड़ा आत्मीय उस वात्सल्य सागर प्रभु से बढ़ कर कौन हो सकता है, सो सन्ध्योपासन तथा अग्निहोत्र दोनों ही मनुष्य को सच्चे अर्थों में स्वाधीनता दिलाने वाले हैं। अब हम संयम की ओर आते हैं, यह ब्रह्मचर्याश्रम है, हमें शक्ति के महास्रोत तक पहुँचना है, वहीं सुख है, वहीं शान्ति है, वहीं नित्यानन्द है। नित्य कैसे? मनुष्य का सुख दो प्रकार समाप्त हो जाता है। भोग्य पदार्थ की समाप्ति से या भोक्ता की रसास्वादन शक्ति की समाप्ति से, परन्तु जब जीव प्रकृति के माध्यम बिना सीधा प्रभु से रस लेने लगता है तो न भोग्य सामग्री समाप्त होती है, न भोक्ता की रसास्वादन शक्ति, बस इस अवस्था तक प्राणिमात्र को पहुँचाने के लिए मनुष्य मात्र को जीव और ईश्वर के बीच जाने वाले व्यवधानों से पूर्णतयामुक्त करके कैवल्य (Onlyness)तक पहुँचाना ही शिक्षा का उद्देश्य है। यह उद्देश्य इस समुल्लास

में किस प्रकार पूरा किया गया है, अब हमें यह देखना है।

शिक्षा का केन्द्रः आचार

सबसे प्रथम जो बात समझने की है वह यह है कि वैदिक शिक्षा-पद्धति में शिक्षा का केन्द्र आचार शक्ति है, विचार शक्ति नहीं, इसीलिये वैदिक भाषा में गुरु को आचार्य कहते हैं , विचार्य नहीं। विचार साधन हैं, आचार साध्य है, क्योंकि इसके द्वारा ही मनुष्य ब्रह्म में विचरता-विचरता पूर्णतया ब्रह्मचारी हो जाता है और जब तक वह इस ध्येय तक नहीं पहुँच जाता है, तब तक के लिए उसे एक ही आज्ञा है "**चरैवेति चरैवेति**"।

परन्तु विचार का क्षेत्र उसका चरने का क्षेत्र है। वह नाना प्रकार के विषयों में इन्द्रियों द्वारा विचरता हुआ विषयरूपी घास से ज्ञानरूपी दूध बनाता रहता है, परन्तु व्रत के खूँटे से बँधा होने के कारण कभी गोष्ठ-भ्रष्ट अथवा देवयूथ-भ्रष्ट नहीं होने पाता। इन्द्रियों का क्षेत्र उसके चरने का क्षेत्र है, परन्तु व्रत उसके बँधने का स्थान है। वह व्रत का खूँटा भगवान में गड़ा रहता है, इसलिए वह कभी भ्रष्ट नहीं होने पाता। इस शिक्षा-पद्धति में उसका दो बार यज्ञोपवीत किया जाता है, एक माता-पिता के घर में, दूसरा आचार्य कुल में। ब्राह्मण को संसार में अविद्या के नाश तथा सत्य के प्रकाश का व्रत धारण करना है।

क्षत्रिय को अन्याय के नाश तथा न्याय की रक्षा का व्रत धारण करना है। वैश्य को दारिद्र्य के नाश तथा प्रजा की समृद्धि की रक्षा का व्रत धारण करना है। इस यज्ञ अर्थात् लोकहित के व्रत के खूँटे के साथ बँधना है, इसीलिए इस बंधन का नाम यज्ञोपवीत है, अर्थात् वह रस्सा जो मनुष्य को लोकहित के व्रत के खूँटे के साथ बाँधने के लिए बनाया गया हो, प्रथम यज्ञोपवीत में माता-पिता उसे किस खूँटे के साथ बाँधना चाहते हैं, उनकी इस इच्छा का प्रकाश है।

परन्तु यह व्रत है, स्वेच्छापूर्वक चुना जाने वाला व्रत है, इसलिए आचार्य की अनुमति से ब्रह्मचारी इसे बदल भी सकता है, इसलिए आचार्य कुल में दूसरी बार यज्ञोपवीत किया जाता है। इस व्रत का मूल्य चुकाने मनुष्य को समाज में, सेना में तथा गृहस्थाश्रम में तो जाना है। संसार का हर सैनिक किसी न किसी रूप में झण्डे के सामने शपथ लेता है और हर दम्पती किसी न किसी रूप में एक दूसरे के साथ बँधे रहने की शपथ लेते हैं, परन्तु इस शपथ का लाभ शिक्षा -शास्त्र में लेना यह केवल वैदिक लोगों को ही सूझा। इसके बिना शिक्षा लक्ष्यहीन तीर चलाने के समान है। कोई तीर अचानक लक्ष्य पर भी जा लगता है।

विद्याभ्यास कैसे ?

अब आइये विद्याभ्यास की ओर। इस क्षेत्र में सबसे प्रथम तो मनुष्य को प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा परीक्षा करने का ज्ञान होना चाहिए, फिर भाषा का, फिर अन्य शास्त्रों का; यही क्रम यहाँ रक्खा गया है। परन्तु सबसे अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस क्रम में आनुपूर्वी है। पहले व्याकरण पढ़े, फिर निरुक्त छन्द आदि-यह आनुपूर्वी क्यों रक्खी गई है? आजकल की शिक्षा पद्धति में एक विद्यार्थी प्रतिदिन ८ या १० विषय तक पढ़ता है। इस प्रणाली में उसे गुरु-सेवा, आश्रम-सेवा, चरित्र-निर्माण आदि के लिये कोई समय ही नहीं मिलता, इसलिये प्रतिदिन मुख्य रूप से लगातार कुछ समय तक-एक समय तक एक विषय को पढ़ कर समाप्त करे, फिर दूसरा विषय आरम्भ करे। इस क्रम से पढ़ने से उसे गुरु-सेवा, पशु-पालन, चरित्र-निर्माण इन सबके लिए पूरा समय मिलता है और इस प्रकार शिक्षा के मुख्य अंग आचार-निर्माण की पूर्णता होती है; जिससे आचार्य (आचारं ग्राहयति) को आचार्यत्व प्राप्त होता है।

यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है। ऋषि ने लिखा है कि पुरुषों को व्याकरण, धर्म्म और एक व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य सीखनी चाहिये।

इस अत्यन्त मूल्यवान पंक्ति की ओर ध्यान न देने से आज आर्ष पद्धति के नाम पर सहस्रों विद्यार्थियों के जीवन नष्ट हो रहे हैं।

ऋषि ने चारों वेदों की पाठविधि तो दी है, परन्तु चारों वेदों का पण्डित होना हर एक विद्यार्थी के लिये आवश्यक नहीं ठहराया, उलटा मनु का प्रमाण देकर लिखा है-

षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्यं गुरौ त्रैवेदिक व्रतम्।
तदर्धम् पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा।।

ब्रह्मचर्य ३६ वर्ष, १८वर्ष अथवा ९ वर्ष का अथवा जितने में विद्या ग्रहण हो जाये, उतना रक्खे।

इसको पुरुषों को व्याकरण, धर्म्म तथा एक व्यवहार की विद्या के साथ मिला कर पढ़िये। इसका भाव यह है कि व्याकरण तथा धर्म्म-शास्त्र पढ़ना सब के लिए आवश्यक है। धर्म्म-ज्ञान के लिए जितना व्याकरण पढ़ना आवश्यक है, सो तो सब पढ़ें; इससे विशेष व्याकरण उस विद्या को दृष्टि में रख कर पढ़ें जो उनकी व्यवहार की विद्या है। इसलिए जिसे विद्युत शास्त्र अथवा भौतिक विज्ञान अथवा इतिहास पढ़ना है, उसे महाभाष्य पर्यन्त व्याकरण पढ़ना क्यों आवश्यक है- यह बिल्कुल समझ में नहीं आता, परन्तु आजकल आर्ष पद्धति के नाम पर जो सब बालकों को जबरदस्ती महाभाष्य पढ़ाया जाता है, इससे उन विद्यार्थियों में से बहुतों का जीवन नष्ट होता है और आर्ष पद्धति व्यर्थ बदनाम होती है। ऋषि ने अधिकतम और न्यूनतम दोनों पाठविधि दे दी है, विद्यार्थी की उचित शक्ति के अनुसार हर विद्यार्थी का पृथक्-पृथक् पाठ्यक्रम होना चाहिये । इसीलिए गुरु-शिष्य का सदा एक साथ रहना आवश्यक समझा गया है, जिससे गुरु-शिष्य की रुचि तथा शक्ति दोनों की ठीक परीक्षा करके यथायोग्य पाठविधि बना सके। यहाँ यथायोग्यवाद के स्थान में साम्यवाद का प्रयोग अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हो रहा है।

अन्त में हम इस बात की ओर फिर ध्यान दिलाना चाहते हैं कि वैदिक शिक्षा-पद्धति में संयम अर्थात् ब्रह्मचर्य का स्थान विद्या से ऊँचा माना गया है। संयमहीन शिक्षा कुशिक्षा है, इसलिए संध्योपासन, आनुपूर्वी का पाठ्य-क्रम तथा यज्ञोपवीत संस्कार तीनों ही विद्यार्थी को परमात्मा का भक्ति-दान करके ब्रह्मचारी बना देते हैं। इस संयम की जितनी महिमा गाई जाय, सो थोड़ी है। इस प्रकार यह १८ के १८ अंग जो इस समुल्लास में पाँच सकारों में परिणत हो जाते हैं, उन पाँच सकारों के नामोल्लेख के साथ ही इस लेख को समाप्त करते हैं-

समानता सरलता सामीप्यम् गुरुशिष्ययोः।
स्वाधीन्यं संयमञ्चैव सकाराः पञ्च सिद्धिदाः।।

पुस्तक परिचय

पुस्तक का नाम - 'ऋग्वेद शतक' शब्दार्थ, भावार्थ एवं काव्यानुवाद

कवि - बाबूलाल जोशी-इन्दौर

प्रकाशक-गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली

मूल्य - ४०, पृष्ठ - ९५

आज अनेक धर्मों का साहित्य विश्व में प्रचारित है। उसमें आदिकाल से आजतक मान्यता में सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ यदि है तो वह वेद है। विश्व के पुस्तकालयों में गणना की दृष्टि से वेद का स्थान सर्वोपरि है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, चार हैं, उनमें ऋग्वेद का स्थान सर्वोपरि है। वेद अपौरुषेय हैं। महर्षि ने इसका भाष्य किया था। काल कलेवर के कारण पूर्ण नहीं हो सका। वेद मर्मज्ञ मनु ने वेद का पढ़ना उत्तम बताया। महर्षि वेदोद्धारक दयानन्द ने कहा- वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

ऋग्वेद के १०० मन्त्रों का चयन श्री बाबूलाल जी जोशी ने किया है। वेद मन्त्र के साथ शब्दार्थ, भावार्थ एवं काव्यमय किया है। यह पाठकों के लिए समझने में पूर्ण सहयोगी होगा। कई लोग संस्कृत भाषा से घबराते हैं और कहते हैं कि यह भाषा क्लिष्ट है। आपके समक्ष वेद मन्त्र की झलक प्रस्तुत है-

अयम् होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु,
अयं सजज्ञे ध्रुव आ निषतोऽमर्त्य स्तन्वा इवर्धमानः।।

- ऋग्वेद ६/९/४

शब्दार्थ- अयम= यह (आत्मा अग्नि) होता= आहुति दाता। पश्यतेमम्= इसे देखो। इदं= यह। ज्योरमृतं= अमृत ज्योति। जज्ञे- पुनः प्रकट/प्रादुर्भत। अमर्त्यः= अभौतिक आत्मा। ध्रुव= नित्य। आनिषतः= पूर्व से स्थित अग्नि। तन्वा वर्धमानः- शरीर द्वारा बढ़ता है।

भावार्थः- हे मनुष्यो! आदिकाल से वर्तमान आत्मा को ज्ञान से देखो, यह हम मरणधर्मी मनुष्यों में विद्यमान अमर ज्योति है। यही वह नित्य तत्व है, जो भौतिक शरीर में आकर उसे बढ़ाता और अपनी उन्नति करता है।

काव्यानुवाद

आदिकाल से विद्यमान, आत्म अग्नि की व्याप्ति।
दान क्रिया होता करे, हम में अमृत ज्योति।।
नित्य तत्व जो पहले से, फिर से पादुर्भूत।
अमर्त्य आत्मा देह में, वर्धत गति अनुभूत।

जोशी जी का प्रयास व परिश्रम उत्तम है। पाठक इसका पाठन कर वेद मन्त्रों के मर्म को भली प्रकार समझ सकेंगे। कवि का श्रेय भी तभी सफल होगा।

-देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

ऋषि मेला – २०१५

❄ कार्यक्रम ❄

शुक्रवार, दिनांक २० नवम्बर, २०१५

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ-आसन-प्राणायाम-ध्यान-सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा –पं. सत्यानन्द वेवागीश

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **ध्वजारोहण व उद्घाटन सत्र**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन, विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **भजन-प्रवचन-सम्मान**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ, सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **महर्षि दयानन्द-एक राष्ट्र पुरुष, भजन-प्रवचन-सम्मान**

शनिवार, दिनांक २१ नवम्बर, २०१५

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ-आसन-प्राणायाम-ध्यान-सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ। ब्रह्मा – पं. सत्यानन्द वेवागीश

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **भजन-प्रवचन-सम्मान**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **वर्तमान में आर्यसमाज की कार्य प्रणाली, भजन-प्रवचन-सम्मान**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ-सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **भजन-प्रवचन-सम्मान**

रविवार, दिनांक २२ नवम्बर, २०१४

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ-आसन-प्राणायाम-ध्यान-सन्ध्या

०७.०० से ०९.३० तक – यज्ञ, वेदपाठ, **पूर्णाहुति**, ब्रह्मा-पं. सत्यानन्द वेवागीश

०९.३० से १०.०० तक – वेद प्रवचन

१०.०० से १०.३० तक – प्रातराश

१०.३० से १२.३० तक – **भजन-प्रवचन-सम्मान**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **आर्य युवक सम्मेलन, भजन एवं प्रवचन**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ-सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **धन्यवाद व समापन सत्र**

वेद-गोष्ठी

विषय : **भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद**

स्थान : **ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर**

२० नवम्बर : उद्घाटन सत्र – ११.०० से १२.३० तक

: द्वितीय सत्र – १४.३० से १७.०० तक

२१ नवम्बर : तृतीय सत्र – १०.०० से १२.३० तक

: चतुर्थ सत्र – १४.३० से १७.०० तक

२२ नवम्बर : समापन सत्र

कार्यक्रम में आवश्यकतानुसार परिवर्तन संभव है।

ईश्वर है या नहीं एक विश्लेषण

- ब्र. कश्यप कुमार

संसार में ईश्वर की सत्ता में विश्वास करने वालों की संख्या बहुत अधिक है, यद्यपि ईश्वर के स्वरूप एवं गुण-कर्म-स्वभाव के सम्बन्ध में उनमें मतैक्य नहीं है। परन्तु कुछ लोग ऐसे भी हैं, जिनका मत यह है कि ईश्वर नाम की कोई सत्ता या शक्ति नहीं है और न उसकी कोई आवश्यकता है। सब नास्तिक मत इसी विचार के मानने वाले हैं। इस सोच का आधार है कि ईश्वर किसी को दिखाई नहीं पड़ता है। किसी की पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ आज तक ईश्वर को न देख पाई है, न छू सकी है, न श्रवण, घ्राण आदि के द्वारा अनुभव कर सकी हैं। ईश्वर को न मानने वालों को पूर्व पक्ष और उस परमशक्ति के होने में विश्वास करने वालों को उत्तर-पक्ष मानते हुए चर्चा को इस प्रकार आगे बढ़ा सकते हैं-

पू.- वह इन पाँचों इन्द्रियों से भी नहीं दिखाई देता। अत: वह ईश्वर जो आप कहते हैं। वह नहीं हो सकता।

उ.- इसका स्पष्ट तात्पर्य इतना है कि आप पाँचों इन्द्रियों तक सिमट गये हो, इसके आगे भी विचार करें। अभी तो मन तथा बुद्धि भी अवशिष्ट है।

पू.- अरे भाई! आज तक आपने कभी सुना है कि यह व्यक्ति देखो मन से अथवा बुद्धि से देखता है।

उ.- आप जिसे ''देखना मात्र'' मानते हो, वही ''मात्र देखना'' नहीं होता, देखना अर्थात् जानना भी होता है। ज्ञान प्राप्त करने के अर्थ में भी ''देखना'' शब्द का प्रयोग होता है। अब इसे भी उदाहरण से देखते हैं। यदा-कदा हम कुछ बातों को भूल जाते हैं, तब आँखें बन्द कर विचार करते हैं और झट से याद आने पर कहते हैं- मैंने विचार कर देखा। वास्तव में वही सही है।

इस वाक्य में भी ''देखा'' शब्द का प्रयोग हुआ, पर वह जानने अर्थ में, न कि ''नेत्र से देखने अर्थ में या अन्य इन्द्रियों से देखने अर्थ में। एक प्रयोग और देखिये- अरे भाई! आप एक बार अनुमान करके तो देखो, आपको पता लगेगा। यहाँ भी ''देखो'' शब्द का प्रयोग ''जानो'' अर्थ में ही हुआ है। इससे पता चलता है कि बहुत वस्तुएँ ''मन एवं बुद्धि'' से भी जानी जाती है। वह देखना, यह देखना, वह देखा, यह देखा, वह दिखेगा, वहाँ दिखेगा इत्यादि प्रयोग जानने अर्थ में होते हैं न कि मात्र चाक्षुष प्रत्यक्ष में।

पू.- तो मन से या बुद्धि से तो जाना जाना चाहिये परन्तु ऐसा भी तो नहीं।

उ.- अविद्यारूपी घोर अन्धकार को दूर करो और ईश्वर का आनन्द उठाओ अर्थात् अविद्यारूपी आवरण की परत बहुत मोटी है। जो हमें प्रत्यक्ष होने में बाधा पहुँचाती है, उसे दूर करना चाहिये। इसमें शास्त्रों के अनेक प्रमाण है।

न्यायदर्शन. प्रमाणप्रमेय......तत्त्वज्ञानान्नि: श्रेयसाधिगम:।
वैशेषिक. धर्मविशेषप्रसूताद्.........तत्त्वज्ञानान्नि श्रेयसम्।
योग दर्शन. तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम्।

स्वयं वेद भी प्रमाण है।

परीत्यभूतानि परित्य लोकान्.......
आत्म नात्मानमपि सं विवेश।

-यजु. ३२/११

तो जब अविद्या का अवसरण हो जावेगा तब मन के माध्यम से आत्मा तक और आत्मा से ईश्वर तक पहुँच सकेंगे।

और बुद्धि से तो अनुमान कर ही सकते हैं। बिना अनुमान किये ज्ञान नहीं हो सकता। जैसे भोजन सामने रखा है, पर उसे ग्रहण करने का प्रयत्न यदि न किया जावे, तो भूख नहीं हट सकती। उसी प्रकार ईश्वर को जानने के लिए प्रयत्न की आवश्यकता है।

पू.- वह प्रयास किस प्रकार से करें?

उ.- जैसे आप धुएँ को देखकर अग्नि का अनुमान अथवा पुत्र को देखकर जन्मदाता का अनुमान या आधेय को देखकर आधार का अनुमान करते हैं। तब आप मन-ही-मन एक व्याप्ति बनाते हैं और जान लेते हैं कि यह ज्ञान सही होता है।

व्याप्ति का स्वरूप- जहाँ-जहाँ धुआँ होता है, वहाँ-वहाँ अग्नि होती है या जहाँ-जहाँ आधेय होता है, वहाँ-वहाँ आधार होना आवश्यक है।

इसी प्रकार- जो-जो कार्य होता है, उसका कारण अवश्य होता है। आपने किसी घर को बना देखा, तो आपने अनुमान किया कि इसका बनाने वाला कोई अवश्य ही है, घर एक कार्य रूप में देख कर, आपने उसके बनाने वाले का अनुमान किया और निश्चय किया कारण गुणपूर्वक ही कार्य होता। अब यह भी विचार किया कि मैं इसको कार्य, क्यूँ कह रहा हूँ? क्योंकि वह क्षीण होता है। तो एक व्याप्ति आपने और तैयार की कि जो-जो कार्य होता है, वह क्षीण होता है। तो क्षीण होने वाला कार्य होता है और कार्य का कारण भी अवश्य होता है अर्थात् कार्य को कार्य रूप देने वाला कर्त्ता भी जरुरी है। अब इस सृष्टि को ही ले लेते हैं। सृष्टि एक कार्य है यह पता चलता

है क्षीण होना प्रत्यक्ष देखें जाने से और उस कार्य का कर्त्ता भी आवश्यक है, अब वही कौन है, यह भी अनुमान से सिद्ध होता है कि इस संसार को निर्माण करने वाला एक देशी अथवा अल्पज्ञ नहीं हो सकता, अत: ईश्वर का अनुमान होता है।

पू.- यह संसार तो अपने आप ही बना है।

उ.- अब आप उक्त सिद्धान्त के विरुद्ध जा रहे हैं। प्रथम आपने स्वीकार किया था कि जो बना होता है, उसे बनाने वाला होता है। अब सिद्धान्त से सर्वथा भिन्न कह रहे, वह ठीक नहीं।

पू.- क्योंकि यदि ईश्वर ने भी यदि इस संसार को बनाया है, यह कहे तो प्रश्न होगा कि ईश्वर को किसने बनाया?

उ.- हमारा सिद्धान्त जो स्थापित किया था उस तरफ ध्यान दें। जो कार्य होता है, वह क्षीण होता रहता है और जो क्षीण होता हुआ, कोई भी कार्य दिखाई पड़ता है, उसको बनाने वाला कोई अवश्य ही होता है और ईश्वर क्षीण नहीं होता। अत: उसे बनाने वाला कोई भी नहीं हुआ, न है और न होगा। अपितु उसने ही इस संसार को बनाया।

पू.- तो वह ईश्वर कहाँ है?

उ.- वह सर्वत्र कण-कण में है, वह सर्वव्यापक है। तभी तो उसने इतनी बड़ी रचना की है अन्यथा एकदेशी होकर, इसे करना सम्भव नहीं, यह पीछे बता ही आये। और वह सर्वव्यापक है, अत: सर्वज्ञ भी है।

पू.- तब तो प्राकृतिक आपदाएँ नहीं आनी चाहिये। क्योंकि सर्वव्यापक है, अत: उसे ध्यान देना चाहिये कि ये आपदाएँ जीवात्माओं को कष्ट पहुँचायेगी तथा मेरा कार्य करना भी व्यर्थ होगा, क्योंकि मैंने तो आत्माओं को सुख देने के लिए संसार बनाया है और यह बाधाएँ इनको कष्ट दे रही है। इतना ही नहीं अपितु सर्वज्ञ होने से, उसे उस प्रकार का निर्माण करना चाहिये कि कोई भी आपदाएँ आने ही न पावें।

उ.- यह सब ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार होता है वा नियमानुसार कहो। क्योंकि ईश्वर को कर्मफल भी तो देने हैं। अत: इसमें हमारे कर्म ही कारण होते हैं। इससे अतिरिक्त, यह प्रदूषण करने का प्रभाव या परिणाम भी हो सकता है। जैसे कोई मनुष्य एक यन्त्र बनाता है और उसमें विद्युत् को सहन करने की क्षमता एक क्षमता तक ही होती है। यदि उसमें कोई अधिक विद्युत् दे देवें, तो वह जलकर नष्ट ही होगा। इसी प्रकार यह पृथ्वी भी एक सीमा तक ही सहन कर सकती है या सह सकती है। उसके पश्चात् जो होता है, वह हम देखते ही हैं। यदि व्यवस्था को कोई अव्यवस्था रूप देना चाहे, तो उसमें ईश्वर को क्या दोष?

पू.- यदि ईश्वर है और आप उसे मानते हैं, तो बताइये कि आज पूरे विश्व में इतने दुष्टकर्म हो रहे हैं परन्तु ईश्वर तो कुछ भी नहीं करता?

उ.- ईश्वर को क्या करना चाहिये, आप ही बताइये?

पू.- उसे शरीर धारण करना चाहिये और दुष्टों की समाप्ति कर देनी चाहिये।

उ.- यदि वह शरीर धारण करे तो स्थान-स्थानान्तर, देश-देशान्त, विश्व-विश्वान्तर या लोक-लोकान्तर में तथा मोक्ष में प्रत्येक जीवात्मा का ध्यान कौन देगा? उनके कर्मों का ज्ञान कैसे होगा और ज्ञान नहीं होगा तो उनका फल भी नहीं दे सकेगा।

पू.- तो सर्वव्यापक होते हुए, कुछ भी तो नहीं करता?

उ.- आपको कैसे पता कि वो कुछ भी नहीं करता?

पू.- क्या करता है, बताईये?

उ.- वही तो सभी के कर्मों का यथावत् फल देता है। ये भिन्न-भिन्न योनियाँ जो दिखाई पड़ती है, वह सब इसी के व्यवस्था के अन्तर्गत है और आत्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है और ईश्वर उसे हाथ पकड़कर रोक दे, तो वह तो परतन्त्र होवेगा। अत: ईश्वर को उसी रूप में जानना चाहिये, जिस रूप में वह है।

पू.- वह कैसे मिलेगा?

उ.- यह जो हम लोग पाप कर्म करते हैं, उसके कारण को (मिथ्या ज्ञान) को हटा दें तो वह आनन्दस्वरूप परमात्मा प्राप्त होता है, यह शास्त्र कहता है, वेद भी कहता है।

''अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते''

अर्थात् तत्त्वज्ञानपूर्वक ही आप ईश्वर को प्राप्त कर सकते हैं। उसके लिए आप शास्त्रों का अध्ययन कर शीघ्रता से प्राप्त कर सकते हैं।

विशेष सार- यदि हम परमात्मा पर विश्वास नहीं करते तो दोष-पर-दोष ही करते चले चलते हैं।

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चिदहावेदीन्महती विनिष्टः। भूतेषू-भूतेषू विचित्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति।।

- उप.।।

भावार्थः- इस जन्म में उसे जान लिया तो अच्छा होगा, नहीं तो महाविनाश होगा। धीर लोग प्रत्येक जड़-चेतन का भेद जानकर मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

स्वतन्त्रता दिवस का महत्त्व

- वेदप्रकाश आर्य

मनुष्य के लिए स्वतन्त्रता का बड़ा महत्त्व है। मनुष्य को मन, वचन, कर्म की स्वतन्त्रता स्वाभाविक रूप से प्राप्त है। मनुष्य को मनन-चिन्तन-सोच-विचार, बोलने-कहने-अभिव्यक्ति तथा कर्म करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है। यह मनुष्य की उन्नति के लिए आवश्यक है। ईश्वर भी मनुष्य की इस स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप नहीं करता।

संसार में कुछ मनुष्य, समूह, राष्ट्र अपने स्वार्थवश अपने छल व बल के द्वारा अन्य मनुष्यों, समूहों व राष्ट्रों की स्वतन्त्रता का अधिग्रहण करते हैं। यह कार्य प्रतिदिन किसी-न-किसी रूप में चलता रहता है। परन्तु जहाँ कहीं पर स्वतन्त्रता का हनन होता है तो उस स्वतन्त्रता की पुन: प्राप्ति के लिए प्रयास, संघर्ष भी शुरू हो जाता है, जो स्वतन्त्रता की पुन: प्राप्ति तक निरन्तर चलता रहता है। स्वतन्त्रता की पुन: प्राप्ति कितने समय में होगी, यह इस बात पर निर्भर करता है कि स्वतन्त्रता का हरण करने वालों और स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्रयास-संघर्ष करने वालों का साहस, सामर्थ्य कितना है।

हमारे देश में विदेशी लोगों द्वारा हमारी स्वतन्त्रता के हनन का कार्य ग्यारहवीं सदी में ही शुरू हो गया था, जो बीसवीं सदी के सन् १९४७ तक चला। पहले यह कार्य मुगलों द्वारा और बाद में अंग्रेजों द्वारा किया गया। भारतीय अपनी स्वतन्त्रता की पुन: प्राप्ति के लिए इस लम्बे काल में निरन्तर संघर्ष करते रहे। ऐसे लोगों में महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह आदि मुगलकाल में प्रमुख थे। बाद में अंग्रेजों के काल में सन् १८५७ से १९४७ तक महारानी लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, नाना साहब, मंगल पाण्डे, महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस, चन्द्रशेखर आज़ाद, रामप्रसाद बिस्मिल, भगतसिंह आदि अनेक लोगों ने स्वतन्त्रता की पुन: प्राप्ति के लिए संघर्ष किया व बलिदान दिया। इस कार्य में महर्षि दयानन्द द्वारा मार्गदर्शन का भी विशेष महत्त्व है। नौ सदियों के लम्बे संघर्ष व बलिदानों के बाद अन्त में १५ अगस्त सन् १९४७ को इस देश के लोगों ने अपनी अपहृत स्वतन्त्रता को पुन: प्राप्त किया। इसीलिए १५ अगस्त को स्वतन्त्रता दिवस बड़े उत्साह से समारोहपूर्वक पूरे राष्ट्र द्वारा मनाया जाता है। इस प्रकार स्वतन्त्रता दिवस का बहुत ज्यादा महत्त्व है। स्वतन्त्रता छिन जाने के बाद ही स्वतन्त्रता के महत्त्व का अहसास होता है। इसलिए यह अति आवश्यक है कि हम स्वतन्त्रता के महत्त्व को समझें और स्वतन्त्रता दिवस पर सभी लोग मिलकर विशेष आयोजन करें। फिर से हमारी स्वतन्त्रता का कोई अपहरण न कर सके, इसके लिए निरन्तर उपाय व प्रयास करते रहें, यह अतिआवश्यक है।

एम.एल.-३५, एलडिको मैनसन, सैक्टर-४८,
गुड़गाँव-१२२०१८ (हरियाणा)

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए **न भेजी** हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग तीन वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा हैं। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने,

जयपुर रोड़, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email :-psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

आस्था भजन (चैनल) पर आर्य विद्वानों के प्रवचन

स्वामी रामदेव जी जन-जन के कल्याण को ध्यान में रखते हुए वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए 'आस्था-भजन' चैनल पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे तक दो घण्टे के बीच वैदिक विद्वानों के प्रवचनों को प्रसारित करवा रहे हैं।

इस कार्य में परोपकारिणी सभा द्वारा भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रवचनों की आपूर्ति के लिए ऋषि उद्यान में रिकॉर्डिंग-यूनिट चल रही है और लगातार नित नये प्रवचनों की रिकॉर्डिंग की जा रही है। परोपकारिणी सभा ये प्रवचन आस्था-भजन (चैनल) को प्रदान कर रही है।

इन दिनों 'आस्था-भजन' (चैनल) पर प्रतिदिन सायं ७ से ७.२० बजे तक **आचार्य धर्मवीर** के वेद-प्रवचन, ७.३० से ७.५० तक **स्वामी विष्वङ्** के योगदर्शन प्रवचन, ८.३० से ८.५० तक **आचार्य सत्यजित्** के प्रवचन प्रसारित हो रहे हैं। इसी प्रकार आगे भी 'आस्था-भजन' पर प्रतिदिन सायं ७ से ९ बजे के बीच अन्य विद्वानों के व अन्य विषयों पर प्रवचन प्रसारित होते रहेंगे।

धर्मप्रेमी जन इन प्रवचनों का अधिकाधिक लाभ उठाएँ और अन्यों को भी अधिकाधिक सूचित करें।

'आस्था-भजन' (चैनल) डिश-टी.वी. और डी.टी.एच. पर उपलब्ध है, किन्तु टाटा-स्काई, वीडियोकोन, बिग-टी.वी. आदि पर नहीं आ रहा है। जिनके पास ये नहीं आ रहा है, वे अपने प्रसारक (सर्विस प्रोवाइडर) को बार-बार कह कर प्रेरित करते रहें, जिससे कि ये भी आस्था भजन को प्रसारित करने लगें। ऐसा करके वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में आप भी सहयोग प्रदान कर सकते हैं। जो केवल से देखते हैं, वे भी अपने केबल ऑपरेटर को कह कर आस्था भजन आरम्भ करवा सकते हैं।

मानवीय भोजन तथा उसका परिचरण

– आचार्य शिवकुमार

प्रस्तुत लेख का विषय है, मनुष्य का भोजन तथा उसका प्रकार। भोजन शब्द की सिद्धि के लिए पाणिनी ने एक धातु सूत्र लिखा है- "**भुज पालन अभ्यवहारयो**" इस धातु के दो अर्थ हैं– एक पालन करना, दूसरा भोजन करना। इसी धातु से अन्योन्य अनेक शब्द बनते हैं, जैसे- भोग, भोज्य, भोक्ता, भोक्तव्य आदि (भोग तथा भोक्ता का) भोज्य और भोक्ता का निकट (नित्य) सम्बन्ध है। प्राकृतिक जड़ पदार्थ परार्थ हैं, अर्थात् चेतन आत्मा के लिए है। आत्मा जब स्व कर्मानुसार मानव व अन्य प्राणी के शरीर में आता है तो कर्मफल के तद्रूप शरीर की रचना होती है। शरीर पंच भौतिक होने से तत् तत्त्व की आवश्यकता होती है। वह जरूरत भूख के रूप में अभिव्यक्त होती है। उसकी कमी व आवश्यकता की पूर्ति विभिन्न भक्ष्यों से की जाती है। यहीं से भोक्ता भूख तथा भोजन के इस त्रिक का सूत्रपात होता है। ये स्वखाद्यत्रिगुणात्मक होते हैं, क्योंकि जो गुण कारण में होता है, वह कार्य में भी देखा जाता है। "**कारणगुणपूर्वकः कार्य गुणोदृष्टः**" (वै. अ. २ आ. १ सू. २४) अर्थात् "जैसे कारण में गुण होते हैं वैसे ही कार्य में होते है"। इन सत्त्वादि के तीनों गुणों के पृथक-पृथक गुण-धर्म है। मूल प्रकृति के पंचभूत विकार हैं। इन्हीं से समग्र स्थूल शरीरों की रचना होती है। ऊपर से लेकर शरीर तक का सम्बन्ध नितान्त रूप से कारण-कार्य के अनुरूप चलता रहता है। इसी प्रकार सभी प्राणियों के इन्हीं प्राकृतिक तत्त्वों से शरीरों का निर्माण होता है तथा स्व-स्व गुण-धर्म निमित्त शरीर में रहते हैं। सभी प्राणियों की नेक प्रकृति स्वभाव तथा जीने का कारण बड़ा विलक्षण प्रकार रहता है। अपनी-अपनी स्वाभाविक प्रकृति व शरीर आकृति के आधार पर उनका अपना-अपना भोजन भी निश्चित है। क्षुद्रजीव से लेकर विशालकाय पर्यन्त सभी प्राणियों में एक निर्धारित जीवन-शैली है। इसमें तनिक भी विपर्यय नहीं होता है। भोजन भक्षी प्राणियों को स्थूल रूप से दो भागों में विभक्त कर सकते हैं– शाकाहारी और मांसाहारी। अब देखना यह कि मनुष्य कौन से आहार पर विश्वास रखता है? सभी प्राणी अपने-अपने भोजन पर पूर्ण विश्वस्त हैं। किन्तु मानव अपने भोजन पर अभी तक निर्णय नहीं कर पाया है कि मनुष्य का भोजन कौन-सा है? पशु-पक्षी, जन्तु, जानवर बुद्धिविहीन होने पर भी अपने खाद्य पर अटल है, किन्तु आश्चर्य है कि सभी प्राणियों में बुद्धिमान, मनुष्य अपने खाद्यों में चंचल व दुर्बल है। अतः कहा है "**लोल्यं दुःखस्य कारणम्**"- जीभ का लालच सभी दुःखों का कारण है। पर प्राणी के शरीर को विनष्ट करके अपने जीभ के स्वाद को पूरा करना कहाँ तक सही है? मांस भक्षण से मनुष्य का स्वभाव हिंसक व तामसिक हो जाता है। आयुर्वेद के चरकादि ग्रन्थों में जो मांस भक्षण का विधान किया है, वह किसी परिस्थिति विशेष के लिए हो सकता है अथवा किसी रोग विशेष के लिए हो सकता है। सर्व साधारण एवं निर्विकल्प नियम नहीं है। मांस के अन्य अनेकों विकल्प हैं, उसके स्थान पर अनेक वन्य औषधियों से रोग का निवारण किया जा सकता है। अतएव मांस मनुष्य का भोजन नहीं, क्योंकि यह मानवीय प्रकृति के सानुकूल नहीं है। सचमुच मनुष्य का भोजन तो फल, दूध, अन्नादि सर्वोत्तम पदार्थ हैं। फलाहार जो प्राकृतिक रूप से स्वयं वृक्ष पर परिपक्व होता हैं। जिसे किसी भी प्रकार के "केमिकल" से नहीं पकाया हो, वहीं सर्वोत्तम है। दूसरा- उत्तम गवादि पशुओं का दूध, जो किसी भी मिलावट रहित होना चाहिये। तृतीय है– अन्नाहार, जो धरती के गर्भ से उत्पन्न होकर सभी का पालन करता है। किन्तु अत्याधुनिक स्वादों से अनाज को पूर्ण दूषित करके खाना स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है। ध्यातव्य है कि आहार की शुद्धि होने पर ही सत्त्व बुद्धितत्त्व की शुद्धि होती है और सत्त्व शुद्ध होने पर ही निश्चल स्मृति होती है। हमारे शरीर में पंचकोष होते हैं। अन्न का सम्बन्ध शरीर के पाँच कोषों से है। इन पंच कोषों में सबसे पहला अन्नमय कोष है। अन्नमय कोष की शुद्धि होने पर अन्य कोषों की उत्तरोत्तर शुद्धि व परिमार्जन होता जाता है। यह सर्वविदित है कि रोगोत्पत्ति प्रायः अनियमित आहार-विहार के कारण होती है। स्वास्थ्य के मूल रूप उपस्तम्भ तीन हैं- आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य। ये आयु के प्रमुख बिन्दु हैं और परमाचरणीय हैं क्योंकि धर्म,

अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए आरोग्य ही मूल साधन है, अत: देश, काल, अवस्था, गुण, परिपाक, हेतु, लक्षण, स्वभाव आदि का परिज्ञान करके ही सत्त्व, बल, आरोग्यदायक ओषध सम भोजन की योजना करें। ध्यान रहे कि भोजन अथवा भोज्य पदार्थ भोग न बन जाय, जिससे रोग के वशीभूत होकर दु:ख भोगना पड़े, क्योंकि रोग सबसे भयंकर दु:ख होता है। यहाँ वैदिक सूक्ति है- **तेन त्यक्तेन भुंजीथा:।** भोज्य पदार्थों का भोग भी करना है, किन्तु त्यागपूर्वक करना है। ये सभी विधि विधान शरीर के परिपेक्ष में किये गये हैं। शरीरस्थ आत्मा के विषय में कोई विचार नहीं किया गया है, अत: समूचे क्रम में आत्मा ही सर्व उपादेय है। यह सब कुछ आत्मा के लिए है, शरीरेन्द्रियों के द्वारा भौतिक पदार्थों से जो सम्बन्ध होता है, वह अन्तत: आत्मा तक पहुँचाता है, क्योंकि आत्मा ही कर्त्ता और भोक्ता है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन रहता है और पवित्र मन से आत्मा की पवित्रता बढ़ती है, अत: आत्मिक-सुख परमेश्वर की भक्ति अर्थात् यथोचित् ईश्वर की प्रार्थना करने से प्राप्त होती है। ईश्वर प्रदत्त पदार्थों के उपयोग करने से पहले उसका धन्यवाद करना एक परम कर्त्तव्य है। इसके बिना मनुष्य कृतघ्न एवं दण्डनीय है। परमेश्वर के धन्यवाद के रूप में एक वेद मन्त्र का पाठ किया जाता है-

ओ३म् अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिण:।
प्र प्र दातारं तारिषऽऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।।

हे अन्न के स्वामी प्रभो! हमारे लिए बल, बुद्धि, तेज, ओज प्रदान करने वाले रोग रहित अन्न प्रदान करो, हे स्वामिन्! हमें आत्मिक शक्तिदायक अन्न दो, जिससे जीवन आरोग्यवान् होकर सुखपूर्वक जी सकें। इस वेद मन्त्र का उच्चारण भोजन से पूर्व करना चाहिये, क्योंकि यह ईश्वर की आज्ञा है। इससे भिन्न मन्त्रों का उच्चारण भोजन से पहले करना अप्रासंगिक है। जैसा मनुष्य समुदाय में एक प्रचलन है-

ओ३म् सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु।
सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु माविद्विषावहै।।

-ब्रह्मानन्द वल्ली प्रथमोऽनुवाक:

अर्थ- हे परमात्मन्! एक साथ ही हम दोनों की रक्षा करो। साथ-साथ ही हम दोनों की रक्षा करो। साथ ही बल को बढ़ावे तेजयुक्त प्रभावजनक हम दोनों का पढ़ना, स्वाध्याय, एक साथ ही हो। हम द्वेष न करें, कभी भी एक-दूसरे का अहित न सोचें।

यहाँ विचारणीय यह कि इस औपनिषदिक मन्त्र का उच्चारण भोजन काल में किया जाता है, क्या यह उचित है? इसी मन्त्र की एक क्रिया पद पर विचार करने से अच्छी प्रकार समाधान हो जाता है। इस परिप्रेक्ष में पाणिनी मुनि का एक सूत्र है- **''भजोऽनवने''** (पाणिनि अष्टाध्यायी तृतीय अ. सू. सं. ६६) अर्थ- **भुजधातोरनवनेऽर्थे वर्तमानादात्मने पदं भवति। भुनक्तु** अर्थात् भुज धातु खाने के अर्थ में हो तो आत्मनेपद होती है। इस मन्त्र में जो क्रियापद है वह परस्मैपद है, अत: भुनक्तु का अर्थ होगा- रक्षा करना, न कि भोजन करना **''भुक्ते''** का अर्थ भोजन करना होता है। वैदिक परम्परा अनुगत भोजन से पूर्व उच्चारणीय मन्त्र तो (अन्नपते....) वही मन्त्र प्रासांगिक और सार्थक है। अन्य मन्त्र अथवा कोई श्लोक आदि कदापि संगत नहीं हो सकता। इसी प्रकार से कुछ लोग गीता के एक श्लोक का भी उच्चारण करते हैं:-

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम्।
ब्रह्मैवतेन गतव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना।।

- गीता-४-२४

अर्थ- जिस यज्ञ में अर्पण अर्थात् स्त्रुवा आदि भी ब्रह्म है और हवन किये जाने योग्य द्रव्य भी ब्रह्म है तथा ब्रह्म रूप कर्त्ता के द्वारा ब्रह्म रूप अग्नि में आहुति देना रूप क्रिया भी ब्रह्म ही है। अतएव गीता के इस श्लोक को प्रसंग से रहित ही बोला जाता है। इस श्लोक में ऐसा कोई भी शब्द नहीं है, जो भोजन से सम्बन्धित किसी बात को प्रकट करता हो, परन्तु न जाने लोग इस श्लोक को भोजन से पूर्व क्यों उच्चारण करते हैं? सचमुच यह विचारणीय बिन्दु है। सभी सज्जन मनुष्यों का कर्त्तव्य है कि असत्य को छोड़कर सत्य का ग्रहण करें। यही धर्म तथा यही सत्कर्म है।

- म.क. आर्ष गुरुकुल, (वैदिक आश्रम),
कोलायत, जन. बीकानेर, राज.
चलभाष- ०९१६६३२३३८४

वैदिक पशुबन्ध इष्टि (यज्ञ) का वैज्ञानिक विवेचन (एक संक्षिप्त नोट)

- डॉ. पुष्पा गुप्ता

श्री आर.बी.एल. गुप्ता बैंक में अधिकारी रहे हैं। आपकी धर्मपत्नी डॉ. पुष्पा गुप्ता अजमेर के राजकीय महाविद्यालय संस्कृत विभाग की अध्यक्ष रहीं हैं। उन्हीं की प्रेरणा और सहयोग से आपकी वैदिक साहित्य में रुचि हुई, आपने पूरा समय और परिश्रम वैदिक साहित्य के अध्ययन में लगा दिया, परिणामस्वरूप आज वैदिक साहित्य के सम्बन्ध में आप अधिकारपूर्वक अपने विचार रखते हैं।

आपकी इच्छा रहती है कि वैज्ञानिकों और विज्ञान में रुचि रखने वालों से इस विषय में वार्तालाप हो। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस वर्ष वेदगोष्ठी में एक सत्र वेद और विज्ञान के सम्बन्ध में रखा है। इस सत्र में विज्ञान में रुचि रखने वालों के साथ गुप्त जी अपने विचारों को बाँटेंगे। आशा है परोपकारी के पाठकों के लिए यह प्रयास प्रेरणादायी होगा।

-सम्पादक

वैदिक पशुबन्ध इष्टि को लेकर भारतीय समाज में अनेक मिथ्या भ्रांतियां उत्पन्न हो गई है।

''वैदिक यज्ञों में पशुओं की बलि दी जाती थी'' यह सर्वथा मिथ्या भाषण प्रचारित हो रहा हैं।

सर्वप्रथम इस बात को समझना आवश्यक है- ये सृष्टि में होने वाले यज्ञ हैं जो महाप्रलय/प्रलय की अवस्था में प्रजापति द्वारा प्रारम्भ किये गये थे। महाप्रलय की वैज्ञानिक स्थिति क्या होगी? नासदीय सूक्त उस स्थिति को बता रहा है परन्तु हमारी वैज्ञानिक दृष्टि न होने से हम उस स्थिति की ठीक से कल्पना नहीं कर पा रहे हैं। सलिल अवस्था का अर्थ है- जिसमें सब कुछ लीन हो गया था अर्थात् भौतिक सृष्टि बिल्कुल नष्ट हो गई थी तथा सब कुछ आग्नेय स्थिति में था - करोड़ों डिग्री के तापमान पर केवल ऊर्जा ही ऊर्जा (Heat Energy)थी। सब कुछ ऊर्जा द्वारा ही व्याप्त था इससे इसे आप: अवस्था भी कहा गया। सलिल तथा आप: का अर्थ जल ले लिया जाता है जो कि पूर्णतया मिथ्या अर्थ है।

आधिभौतिक सृष्टि के प्रारंभ करने का मूल सिद्धांत है करोड़ों डिग्री के तापमान में व्याप्त ऊर्जा को संहित कर(Condensation Process) विभिन्न प्रकार की तरंगों एवं मूल भौतिक कणों में परिवर्तित करना तथा परमाणुओं का निर्माण करना। इतने अधिक तापमान पर क्या कोई पशु - अश्व, ऋषभ, गौ आदि हो सकते हैं?

पशु क्या है? शतपथ ब्राह्मण ६.२.१.२-४ के अनुसार अग्नि ने ५ पशुओं - पुरुष, अश्व, गौ, अवि, अज को देखा। यत् पश्यति तस्मात् पशवः। प्रजापति ने इन ५ पशुओं को अग्नि में देखा आश्चर्य है कि ब्राह्मण वचनों पर ध्यान दिये बिना हमने पशुओं का अर्थ आज के लौकिक प्रचलित शब्दों के आधार पर करके कितना बड़ा अनर्थ कर दिया है?

पशुबन्ध का अर्थ होगा- पशु का बन्धन- पशु को बांधना(Bonding of Animal) - आश्चर्य है कि पशु बन्ध को - पशुवध कहके बहुत ही सरल हास्यास्पद अर्थ कर दिया गया- पशु का वध करना(Killing of Animal)। यही अर्थ वैदिक पशु बन्ध यज्ञ के यथार्थ अर्थ को न समझने के कारण भ्रांतियां पैदा कर रहा है। कुछ ब्राह्मणों / विद्वानों ने - पशुबन्ध के स्थान पर पशुवध करके वेदों के वास्तविक अर्थ का अनर्थ ही कर दिया ।

पचति क्रिया का अर्थ कर दिया पशु को पकाना परंतु यह तात्पर्य यहाँ नहीं हैं। पचति का अर्थ पचाना किसको? करोड़ों डिग्री की ऊर्जा को संहित करना। अश्व का अर्थ अश्नुते अर्थात् व्याप्त करना। पुरुष - जो पुर में शयन करता है। अर्थात् जो भी भौतिक कण या तरंग का निर्माण होगा उसका केन्द्रीय बिन्दु। गौ गति का प्रतीक है। अवि रक्षा करने के अर्थ में है। अज अजन्मा(Heat Energy)है। प्रजापति ने इन ५ पशुओं को अर्थात् ५ गुण धर्मों को अग्नि

में देखा।

शमिता से अभिप्राय है शमन करने वाला। त्वष्टा रूप अग्नि ही शमिता है जो पशुओं को तराश करके एक निश्चित रूप (आकृति) में लाता है - अत्यधिक ताप की ऊर्जा का **शमन करते हुए, काट-छाँट कर एक निश्चित प्रकार की प्रकाश तरंग को बनाना। ब्राह्मण वचन है- पशु अग्नि है, पशु छंद है। छंद अर्थात् तरंग(Wave)। वैज्ञानिक दृष्टि से एक निश्चित प्रकाश तरंग को ५ गुणों से जाना जाता है -**

(१) तरंग दैर्घ्य (Wave Length) (२) तरंग का विस्थापन (Amplitude) (३) आवृत्ति (Frequency) (४) काल (Time Period) (५) वेग (Velocity)। ये ५ अवयव (गुणधर्म)ही एक तरंग का निर्धारण करते हैं। पशु बन्ध प्रक्रिया में कुल ११ पशुओं का उल्लेख पशु एकादशिनी के रूप में मिलता है। अर्थात् सृष्टि करते समय प्रजापति ने ११ प्रकार की तरंगों का निर्माण किया था।

शमिता द्वारा विशसन करने का अर्थ - पशु को मारना नहीं है अपितु अग्नि को संहित एवं शमित करते हुए - पशु रूप (छंदरूप) तरंग को निश्चित आकृति प्रदान करना है।

पशु का संज्ञपन करना - सं ज्ञपन- सम्यक् रूप से पशु को पहचान लेना अर्थात् जिस प्रकार की आकृति प्रजापति पशु की चाहता था, वह आकृति बन गयी है।

पशु बन्ध प्रक्रिया में आप्री सूक्त का पाठ किया जाता है। अर्थात् प्रजापति की "रिरिचान् इव आत्मा" को आप्यांतित करना। अन्त में स्वाहकृत आहुति दी जाती है। स्वाहकृत प्रतिष्ठा है। स्वाहकृत का तात्पर्य है कि - "सु भाहुतं हविः जुहोति"। तात्पर्य यह है कि प्रजापति जिस कार की तरंग (पशु) का निर्माण करना चाहता था वह कार्य पूरा हो गया।

पशु बन्ध में चार प्रकार की आहुतियाँ दी जाती हैं - (१) वपा आहुति (२) आज्य आहुति (३) अग्रया आहुति (४) सोम आहुति। वपा रेतः रूप है। आज्य देवों का प्रिय धाम हैं। पशु आज्य हैं। रेतः आज्य है। अनेक ब्राह्मण वचन स्पष्ट बताते हैं कि आज्य का, घृत का, हवि के जो प्रचलित अर्थ है, वह वैदिक अर्थ नहीं हो सकता। आज्य, घृत, हवि, पयः, मधु आदि जितने भी शब्द वेदों में प्रयुक्त हैं - जिनकी अग्नि में आहुति दी जाती है - ये विभिन्न प्रकार के अत्यधिक लघु मात्रा में अग्नि को संहित एवं शमित कर बनाये गये भौतिक कण (Quantas, Photones) हैं जो दशपूर्णमास, चार्तुमास्य यज्ञ प्रक्रियाओं में निर्मित किये गये थे।

अग्नि एवं सोम - उष्णता एवं शीत के प्रतीक हैं। करोड़ों डिग्री तापमान पर जब ऊर्जा संहित हुई तो जो स्थान ऊष्मा के संहित होने से खाली हो गया वह स्थान सोमात्मक अर्थात् उस तापमान की तुलना में काफी ठण्डा हो गया। एक उदाहरण - दस करोड़ डिग्री तापमान पर, एक लाख घन मीटर ऊर्जा (Heat Energy) को यदि संहित करके - एक घन मीटर में इकट्ठा कर दिया जाये तो ९९ हजार घन मीटर आकाश रिक्त हो जायेगा - सोमात्मक हो जायेगा तथा संहित ऊर्जा को और आगे संहित करेगा तथा शम् करेगा अर्थात् तापमान को कम करेगा।

इससे यह स्पष्ट है कि पशु बन्ध यज्ञ द्वारा प्रजापति ने ११ प्रकार के पशुओं अर्थात् तरंगों का निर्माण किया था। पशु को मारना या पशु की बलि देना यह एकदम मिथ्या है तथा वैदिक अर्थ के सर्वथा प्रतिकूल है।

- १७६ आदर्श नगर, अजमेर

ईश्वर का आश्रय न करके कोई भी मनुष्य प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता। जैसे ईश्वर सनातन न्याय का आश्रय करके सब जीवों को सुख देता है वैसे ही राजा को भी चाहिये कि प्रजा को अपनी न्याय व्यवस्था से सुख देवे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३९

जब तक सब की रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्षसुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीव को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३० अक्टूबर २०१५ तक)

१. श्रीमती मधुरभाषनी कपूर-जयपुर, राज. २. श्री श्याम सुन्दर शर्मा-अजमेर ३. श्री प्रभूलाल कुमावत-किशनगढ़, राज. ४. श्री अनिरुद्ध शर्मा-अजमेर ५. श्री अजय कुमार वैश्य-अरोलीनावी ६. श्रीमती कमला देवी-अजमेर ७. श्री चन्द्रमुनि व श्रीमती विमला आर्या-गंगानगर, राज. ८. श्री सुभाष आर्य-दिल्ली ९. श्री उपेन्द्रनाथ तलवार-नई दिल्ली १०. श्री कर्सनसिंह राठी-झज्जर, हरि. ११. श्री चन्द्रमुनि-सादुलशहर १२. डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी-नई दिल्ली १३. श्री योगेन्द्र दम्भानी-कोलकाता, पं. बंगाल १४. श्री विवेक/श्रीमती श्रद्धा- सहारनपुर, उ.प्र. १५. श्री श्याम बाबू आर्य/श्री उषा आर्या-गाजियाबाद, उ.प्र. १६. श्री बी.एम. महात्रे- हैदराबाद, आ.प्र. १७. श्रीमती सीतादेवी- अजमेर १८. श्री राजकुमार राठी-फरीदाबाद, हरि. १९. श्री सुरेन्द्र कुमार सिंगला/श्रीमती सुनीता सिंगला- चंडीगढ, पंजाब २०. आर्यसमाज, राजाजीपुरम्-लखनऊ, उ.प्र. २१. श्री प्रमोद कुमार- हिसार, हरि. २२. श्री ज्योतिप्रकाश- जबलपुर, म.प्र. २३. श्री व्रतमुनि- अजमेर २४. श्रीमती विद्यावती- कैथल, हरि. २५. श्रीमती ऋचा स्वामी- बीकानेर, राज. २६. श्रीमती कौशल्या- बीकानेर, राज. २७. श्रीमती कान्ता लाम्बा- यू.एस.ए. २८. सुश्री सोनू सिंह आर्या/श्री रतना सिंह/श्री छज्जू सिंह- सहारनपुर, उ.प्र. २९. श्री कैलाश- मुम्बई, महाराष्ट्र ३०. श्रीमती सरोजबाला- हिसार, हरि. ३१. श्री ताराचन्द लेखपाल- सहारनपुर, उ.प्र. ३२. श्री विवेक कुमार- सहारनपुर, उ.प्र. ३३. श्री श्रीकांत आर्य- बंगलौर, कर्नाटक। **- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३० अक्टूबर २०१५ तक)

१. श्री संदीप गुर्जर- हरदा २. श्री मयंक कुमार- अजमेर ३. श्री उत्तम महेश्वरी- अजमेर ४. श्रीमती प्रेमलता शर्मा-अजमेर ५. सत्संग मण्डल- अजमेर ६. श्री कर्सन सिंह राठी- झज्जर, हरि. ७. श्री राजेन्द्र सिंगला- अजमेर ८. श्री नारायण सिंह चौहान- चुरु, राज. ९. श्रीमती कमला देवी/श्री बद्रीप्रसाद पंचोली- अजमेर १०. श्री संदीप मलिक- सोनीपत, हरि. ११. श्रीमती सुमन सोनी- अजमेर १२. डॉ. प्रवीण माथुर- अजमेर १३. श्री बलबीरसिंह- दिल्ली १४. श्री उपेन्द्रनाथ तलवार १५. श्री कन्हैयालाल खाती- अजमेर १६.श्री तेजप्रकाश अग्रवाल- देहरादून, उत्तराखण्ड १७. मुनि मोहलादसिंह-रामपुर १९. श्री हीराचन्द/श्रीमती संतोषदेवी- केकड़ी, राज. २०. श्रीमती शकुन्तला- बीकानेर, राज. २१. श्री राजेश आर्य-हिसार, हरि. २२. श्री हेमन्त कुमार- महैन्द्रगढ़, हरि. २३. श्री जगराम यादव- महेन्द्रगढ़, हरि. २४. श्री जयप्रकाश आर्य-गोंडा, उ.प्र. २५. माता प्रेमवती आर्या- हिसार, हरि. २६. श्री अजबसिंह- सहारनपुर, उ.प्र. २७. श्री अनुज मलिक-बागपत २८. श्री शेरसिंह- हिसार, हरि. २९. श्री बलजीत आर्य- नरेला, दिल्ली। **- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

पृष्ठ संख्या ४२ का शेष भाग.....

१६. आर्यसमाज चरखी दादरी, जि. भिवानी, हरि. के चुनाव में **प्रधान**- प्रो. देवदत्त आर्य, **मन्त्री**- श्री राजेन्द्र कुमार आर्य, **कोषाध्यक्ष**- डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य को चुना गया।

शोक समाचार

१७. भजनोपदेशक श्री जगत वर्मा के पिता **श्री शिवपाल जी** का ९४ वर्ष की आयु में १० अक्टूबर २०१५ को लालडू मण्डी, चण्डीगढ़-अम्बाला में देहान्त हो गया। अन्तिम संस्कार उनके पौत्र श्री संजीव कुमार वेदालंकार ने पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न कराया।

१८. समाजसेवी लाला परशुराम आर्यसेवक की सुपुत्री तथा स्व. श्री देवप्रिय आर्य सिद्धान्तशास्त्री की पत्नी **श्रीमती सुमित्रा देवी आर्या,** सिद्धान्त रत्न का ८५ वर्ष की आयु में ३० अगस्त २०१५ को निधन हो गया। उनका अन्त्येष्टि संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से गुड़गाँव, हरि. में किया गया। माता सुमित्रा देवी की याद में एक ट्रस्ट 'प्रिय परिवार फाउंडेशन' की स्थापना की गई। यह ट्रस्ट वैदिक धर्म के प्रचारार्थ कई माध्यमों से काम करेगा। माताजी द्वारा संग्रहीत भजनों की पुस्तिका का विमोचन व वितरण भी किया गया।

संस्था - समाचार

१६ से ३० अक्टूबर २०१५

१. **यज्ञ एवं प्रवचन**- जैसा कि विदित है कि ऋषि उद्यान आर्यजगत् के उन स्थलों में से है, जहाँ पूरे वर्ष प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ का अनुष्ठान अपरिहार्य रूप से किया जाता है। प्रात: काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा महर्षि दयानन्द कृत वेदभाष्य का स्वाध्याय किया जाता है। सायंकाल प्रतिदिन यज्ञ और **महर्षि दयानन्द** द्वारा रचित आर्योद्देश्यरत्नमाला नामक लघु ग्रन्थ का स्वाध्याय करवाया जाता है।

ऋग्वेद के दसवें मण्डल के १२५ वें सूक्त की व्याख्या करते हुए **डॉ. धर्मवीर जी** ने कहा कि इसके ऋषि आम्भृणी वाक् और देवता भी आम्भृणी वाक् है, इसलिये इसे वागाम्भृणी सूक्त कहते हैं। अभिव्यक्ति का सबसे छोटा और सरल साधन वाणी ही है। इस सूक्त में बताया गया है कि वसु, रुद्र, आदित्य, सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, विद्युत, द्युलोक, पृथिवीलोक आदि को सर्वत्र व्याप्त परमात्मा अपने ज्ञान और सामर्थ्य से धारण कर रहा है। विद्वज्जन बहुत प्रकार से उस ज्ञान की व्याख्या करते हैं। ज्ञान के अभाव में मनुष्य का कुछ भी विकास नहीं हो सकता। मनुष्य और पशु में ज्ञान और उसके उपयोग का ही अन्तर है। ईश्वरीय ज्ञान ही साधारण मनुष्य को मेधावी, ऋषि, महर्षि बनाता है।

विजयादशमी पर्व के अवसर पर उन्होंने कहा कि प्रत्येक पर्व हमारे मन में उत्साह, उमंग और ऊर्जा देता है । हमारे ऋषियों ने प्रत्येक पर्व को प्रकृति से जोड़ रखा है। प्रकृति के साथ-साथ चलना, सहज, सरल, स्वाभाविक और सुखद होता है। ऋषि लोग जब इकट्ठे होकर बात करते हैं , तब हवायें कल्याणकारी होकर बहने लगती हैं। सारी दिशायें आलोकित हो जाती हैं। नमी युक्त फूलों की वर्षा होती है। हमारे देश में अनेक परम्परायें हैं। श्रावणी से श्राद्ध तक स्वाध्याय, पश्चात् श्राद्ध में संन्यासियों, वानप्रस्थियों, विद्वानों का सत्कार, नवरात्रा में उपासना और दशहरा में मन इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की जाती है। पर्व, उत्सव के दिन सभी के मन का उत्साह बाहर निकलता है। सब प्रसन्नचित्त रहते हैं। विशेष वस्त्र धारण करते हैं मिठाइयाँ खाते हैं। एक जैसे खानपान, दिनचर्या से निराशा होती है उससे पर्व, उत्सव हमें बचाते हैं। ऋतु परिवर्तन से भी हमारे मन और शरीर में नई ऊर्जा का संचार होता है। हताशा-निराशा का वातावरण दूर होता है। दशहरा का त्यौहार पूर्णत: प्राकृतिक है, जैसे दीपावली, होली, श्रावणी आदि सभी पर्व ऋतु परिवर्तन के परिचायक हैं। कुछ ऐतिहासिक कथायें भी इससे जुड़ी हुई हैं। हमारे देश के बहुसंख्यक लोग इसे राम - रावण के युद्ध से जोड़कर देखते हैं।

योग शिविर आरम्भ होने के अवसर पर ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त के मन्त्र 'उप त्वा अग्ने ......' की व्याख्या करते हुए कहा कि सभी मत-सम्प्रदाय के लोग अपने-अपने ढंग से ईश्वर की उपासना करते हैं। इस मन्त्र में उपासना की आदर्श पद्धति बतायी गयी है, जो सब मनुष्यों के लिये सरल है, सहज है। इस पद्धति से संसार के सभी स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध ईश्वर का ध्यान कर सकते हैं। मूर्ति, चित्र, घंटी, दीपक, भोग आदि बाहरी भौतिक साधनों की कोई आवश्यकता नहीं होती है। उपासना के लिये नाचना, कू दना, विभिन्न प्रकार के आसन, मुद्रा आदि की भी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि ईश्वर की उपासना मन से उसके विषय में विचार करने से होती है। उपासना से शारीरिक थकान एवं मानसिक तनाव से मुक्ति मिलती है। प्रात:, सायं, दिन-रात की संधि बेला में संध्या उपासना करनी चाहिये। जब वातावरण में शीतलता और शांति होती है, तब निश्चिन्त होकर शांत एकांत स्थान में बैठ मन को अन्य विषयों से हटा कर ईश्वर का चिंतन करें। इस मन्त्र में परमेश्वर को सम्बोधित करते हुए भक्त कहते हैं कि हे अग्ने! हम प्रतिदिन दो बार प्रात:-सायं तेरे पास आते हैं और अपने शरीर को स्थिर कर मन,बुद्धि से तेरे गुण-कर्म-स्वभाव का चिंतन करते हैं। समर्पण और नम्रतापूर्वक तेरा ध्यान करते हैं। जब मन को ईश्वर में लगाते हैं तब वह परमात्मा बुद्धि में ज्ञान का प्रकाश करता है। जब उसकी कृपा प्राप्त होती है, तभी आनन्द प्राप्त होता है। केवल प्रवचन करने, बुद्धि से निश्चय करने, बहुत सुनने से बहुत पढ़ने से वह प्राप्त नहीं होता है। उपासना करने वाले बहुत होते हैं, किन्तु जिसे वह योग्य समझता है, उसे ही अपने से जोड़ लेता है।

प्रात: कालीन सत्संग में आचार्य **सत्यजित् जी** ने बताया कि मानवमात्र का धर्मग्रन्थ वेद है। हम वैदिकधर्मी

हैं, हम वेद को सर्वोपरि ग्रन्थ मानते हैं और जो ऋषियों के बनाये वेदअनुकूल ग्रन्थ हैं, उनको भी मानते हैं। धर्म धारण करने पर रक्षा करता है। धर्म हमें नियम, अनुशासन, विधि और निषेध बताता है। वैदिक धर्म मनुष्य की निजी स्वतन्त्रता और सुख प्राप्ति में बाधक नहीं, किन्तु सहायक है। वैदिक धर्म सभी मनुष्यों के लिये सब देशों में सदा सुखदायक होता है। वेद के आदेश, उपदेश, शिक्षायें व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय सुख, शांति और समृद्धिदायक हैं। आध्यात्मिक और सांसारिक सभी लोगों के सुखी रहने का उपाय हमें वेद से ही प्राप्त होता है। समाज की समस्याओं का समाधान करने के लिये शिक्षा, व्यवस्था और दण्ड- तीनों ही अत्यन्त आवश्यक हैं। वेद में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सब विद्या है। आज के समय में भी वेद प्रासंगिक हैं। जो लोग वेद को आज उपयोगी नहीं मानते वे वेद के विषय में कुछ भी नहीं जानते। वेद में शासन व्यवस्था की पूर्ण जानकारी है। वेद में सभी समस्याओं के मूल कारण और समाधान का सर्वोत्तम ज्ञान है। जो वेद के अनुकूल आचरण करते हैं, वे सुखी रहते हैं और जो वेद के विरुद्ध आचरण करते हैं, वे पहले भी दुख पाते थे और आज भी पीड़ित हैं और आगे भी होंगे। राष्ट्र में अध्यापक ऐसे हों जो पृथ्वी से परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों का जानने वाले, दूसरों को शीघ्र पढ़ा कर विज्ञान देने वाले हों। धन सम्पन्न और सत्य का आचरण करने वाले हों। उत्तम शिक्षा, सभ्यता और विनय देने वाले हों। राजधर्म को बढ़ाने वाले हों। धर्म के उपदेश का अधिकार केवल योग्य विद्वानों को होना चाहिये। दण्ड के बिना समाज में पूर्ण सुधार सम्भव नहीं है अत: शिक्षा, उपदेश, व्यवस्था के साथ दण्ड भी आवश्यक है। वैदिक न्याय-प्रणाली नहीं होने के कारण बहुत से मामले लम्बित हैं और न्यायालयों में नये-नये मामले बढ़ते जा रहे हैं, क्योंकि न्याय व्यवस्था में वकील और जज धन प्राप्ति को पहला लक्ष्य मानते हैं। जिनका अपराध सिद्ध हो चुका है, उनको बचाने के लिये भी वकील उनकी पैरवी करते हैं। निरपराधियों को दण्ड दिया जा रहा है और अपराधियों को मुक्त किया जा रहा है। वैदिक धर्म और न्याय व्यवस्था ही इन सब समस्याओं का सर्वोत्तम समाधान है।

प्रात:कालीन सत्संग में व्याख्यान देते हुए **आचार्य सोमदेव जी** ने कहा कि संसार में समर्थ की पूजा होती है। जिसके पास यदि कोई सामर्थ्य है, योग्यता विशेष है तो संसार उसको चाहता है और यदि व्यक्ति अशक्त है, असमर्थ है, योग्यताहीन है, संसार उसकी पूजा नहीं करता। संसार का पुराना इतिहास पढ़कर देखें अथवा वर्तमान परिस्थिति को देखें, निश्चित रूप से पहले भी समर्थ लोगों की पूजा हुई है वर्तमान में भी समर्थ ही आगे बढ़ते हैं। असमर्थ का कोई सहयोग नहीं करता। जब हमें दिखता है किसी के पास कुछ तो लोग जुड़ते हैं और लगता है कुछ नहीं है तो लोग नहीं जुड़ते। दूसरी तरफ से हम देखते हैं तो व्यक्ति स्वार्थी होता है स्वार्थ के कारण हमसे जुड़ते हैं अथवा स्वार्थ के कारण हम किन्हीं से जुड़ते हैं उस सात्विक स्वार्थ को छोड़ दीजिये। जिस सात्विक स्वार्थ से जीवात्मा ओत-प्रोत होकर ईश्वर की ओर प्रेरित होता है उसकी ओर बढ़ता है, उसे विद्या से युक्त स्वार्थ कह सकते हैं। लेकिन जो संसार का स्वार्थ है उस स्वार्थ में कहीं न कहीं कोई न कोई हमारा और ही कुछ प्रयोजन मिलता है। जगत् के इस प्रयोजन को देखकर जुड़ता है तो वास्तव में विशेष प्रीति नहीं होती, वास्तव में जो प्रेम होना चाहिये वह नहीं होता। सच्चा प्रेम और स्नेह कोई नि:स्वार्थ योगी व्यक्ति ही करता है। जिस वृक्ष में फल नहीं होते उसे पक्षी भी छोड़कर चले जाते हैं। जले हुए जंगल को छोड़कर हिरण और सब पशु चले जाते हैं। मुरझाये हुए फूल को भँवरे छोड़ जाते हैं। जिस राजा की श्री चली जाती है, उसके मन्त्री उसे छोड़ देते हैं। सूखे हुए तालाब को सब पक्षी छोड़कर चले जाते हैं। जब तक समर्थ होते हैं, तभी तक लोग एक दूसरे से जुड़े रहते हैं।

आचार्य कर्मवीर जी ने सायंकालीन सत्संग में बताया कि संसार में रहते हुए हम जो भी कार्य करते हैं जैसे - पढ़ना लिखना, नौकरी, व्यापार, व्यवसाय, धार्मिक अनुष्ठान आदि। उन सबका उद्देश्य सुख प्राप्त करना है। यदि ज्ञानपूर्वक करते हैं तो निश्चित् रूप से सुख होता है और ये सब क्रिया कलाप अज्ञानपूर्वक करते हैं तो दु:ख प्राप्त होता हैं। ज्ञान-अज्ञान सदा जीवात्मा के साथ लगा रहता है। हम ज्ञानानुकूल कर्म करके सुखी रहें, इसलिये परमात्मा ने सृष्टि के आदि में वेदविद्या का प्रकाश किया। ऋषियों ने वेदों के अनुकूल दर्शन उपनिषद् आदि ग्रन्थों का निर्माण किया। कठोपनिषद् में कहा है कि वह ईश्वर एक है। ईश्वर को मानने वाले आस्तिक लोगों में दो वर्ग हैं। एक वे हैं जो शास्त्रज्ञान का अभाव होने के कारण ईश्वर को साकार और अनेक अवतार लेने वाला मानते हैं। दूसरा

वर्ग वेद और वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थों के विद्वानों का है जो ईश्वर को निराकार और सर्वव्यापक मानते हैं। ईश्वर ने संसार में अनेक पदार्थों की रचना की है उनमें सर्वश्रेष्ठ रचना मानव शरीर है। इस मानव शरीर में सर्वोत्तम पदार्थ बुद्धि है, जिसको देखकर बड़े-बड़े वैज्ञानिक भी आश्चर्य करते हैं। आजकल के सुपर कम्प्यूटर को बिना बुद्धि के मनुष्य बना नहीं सकते । इसी प्रकार संसार के अन्य पदार्थों को देखने पर ईश्वर के अनन्त ज्ञान का पता चलता है।

सायंकालीन सत्संग में **उपाचार्य सत्येन्द्रजी ने महर्षि दयानन्द** द्वारा रचित अर्योद्देश्यरत्नमाला के पूजा विषय की व्याख्या करते हुए कहा कि चेतन देवताओं की पूजा का अर्थ सम्मान, अनुकूल प्रिय आचरण करना है। जिस व्यक्ति की पूजा करना चाहते हैं, उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी पूजा ही है। जड़ देवों की पूजा का अर्थ उन-उन पदार्थों का उचित रीति से उपयोग करना है। इसी प्रकार अपूजा, जड़, चेतन, भावना, अभावना आदि शब्दों के बारे में विस्तार से बताया । पण्डित के सम्बन्ध में कहा कि केवल यज्ञ, कथा, प्रवचन करना मात्र पण्डित के लक्षण नहीं है, बल्कि जो मनुष्य आत्मा-परमात्मा का ठीक-ठीक जानने वाला हो, वेद आदि शास्त्रों में श्रद्धा रखने वाला हो, बिना बुलाये किसी सभा आदि स्थनों में न जाता हो, स्वार्थ को छोड़कर परोपकार में लगे हों, सदा धर्म के अनुकूल ही आचरण कराता हो, तार्किक और स्मृतिमान् हो, कष्ट होने पर भी धर्म का त्याग न करता हो, सब काल में सुख-दुख का सहन करने वाला हो, विद्या ग्रहण करने और पढ़ाने में सदा पुरुषार्थी हो ऐसे-ऐसे श्रेष्ठ लक्षण वाले मनुष्यों को पण्डित कहते हैं।

रविवारीय सायंकालीन सत्संग में ब्रह्मचारी सोमशेखर जी ने कहा कि आजकल सभी क्षेत्रों में व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति जितना जागरूक है, उतना कर्त्तव्य के लिये नहीं। राजनीति, शिक्षा, न्याय, उद्योग, यातायात, रेल, प्रशासन आदि विभाग के कर्मचारी,अधिकारी अधिक से अधिक धन और सुविधायें चाहते हैं, किन्तु उस अनुपात में काम नहीं करना चाहते, इसलिये राष्ट्रीय स्तर पर कुल उत्पादन और विकास का मूल्यांकन करते हैं तो देखते हैं कि लागत अधिक और निर्माण कम होता है। जिसके कारण महँगाई, भ्रष्टाचार, गरीबी, बेरोजगारी, विभिन्न बीमारियाँ, अनैतिकता, अश्लीलता, साम्प्रदायिक दंगे, जन्मना जातिप्रथा, आरक्षण एवं अन्य अनेक समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं। आने वाली पीढ़ी की चिन्ता किये बिना वर्तमान में लोग स्वार्थ सिद्धि में ही लगे हैं। संवेदना और सहयोग की भावना घटती जा रही है, किन्तु अपवाद रूप में कहीं-कहीं मानवता के प्रति कुछ लोगों में आज भी जागरूकता है। हमारे धर्मग्रन्थ में परमात्मा ने कर्त्तव्य और अधिकार दोनों का उपदेश दिया है। समाज में सुख, शान्ति, समृद्धि और स्वतन्त्रता के लिये अपने अधिकारों के साथ-साथ हमें अपने कर्त्तव्यों को कभी नहीं भूलना चाहिये।

३. डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम- सम्पन्न कार्यक्रम- (क) १७-१८ अक्टूबर २०१५- श्री सुभाष नवाल के घर सत्संग

(ख) २५ अक्टूबर से १ नवम्बर २०१५- ऋषि उद्यान अजमेर में योग शिविर।

४. आचार्य सोमदेव जी का प्रचार कार्यक्रम- सम्पन्न कार्यक्रम- (क) १२-१८ अक्टूबर २०१५- आर्यसमाज सैक्टर १५, सोनीपत में उद्बोधन दिया। **(ख) २४ अक्टूबर २०१५-** आर्यसमाज कानोदा बहादुरगढ़ में सवामन घी से यज्ञ करवाया। **(ग) ७-८ नवम्बर २०१५-** गुरुकुल आर्यनगर, हिसार के वार्षिकोत्सव में मुख्य वक्ता के रूप में सम्बोधित करेंगे।

५. आचार्य कर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रमः- सम्पन्न कार्यक्रम- (क) २२ अक्टूबर २०१५- आर्यसमाज गंगापुर सिटी, सवाई माधोपुर में विजयदशमी पर्व पर उद्बोधन दिया। **(ख) ८ नवम्बर २०१५-** बिजनौर, उ.प्र. में मुण्डन संस्कार करवायेंगे। **(ग) १२-१७ नवम्बर २०१५-** रोहतक में योग शिविर में शिक्षक के रूप में भाग लेंगे।

६. योग साधना शिविरः- परोपकारिणी सभा द्वारा वर्ष में दो बार योग शिविरों का आयोजन किया जाता है, इसी क्रम में इस वर्ष का द्वितीय योग शिविर २५ अक्टूबर से १ नवम्बर तक सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। शिविर में भारत के ११ राज्यों से १६४ साधकों ने भाग लिया। प्रातः ४ बजे से रात्रि ९ बजे तक शिविर विविध सत्रों में विभक्त था यथा योगदर्शन, ईश्वर-जीव-प्रकृति, जिज्ञासा-समाधान, आत्मनिरीक्षण, यज्ञ, प्रवचन, व्यायाम, श्रमदानादि। परोपकारिणी सभा, शिविर के आचार्यों यथा डॉ. धर्मवीर जी, सत्यजित् जी, सत्येन्द्र जी, सोमदेव जी, कर्मवीर जी का बहुत आभार व्यक्त किया और शिविर में सेवा देने वाले ब्रह्मचारियों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। शिविर की पूर्णाहूति के समय शिविरार्थियों ने जीवन को उन्नत बनाने हेतु व्रत लिए।

जिज्ञासा समाधान - ९९

- आचार्य सोमदेव

आपसे निवेदन है कि मेरी निम्न शंकाओं का समाधान करने का कष्ट करें-

१. 'श्रौत-यज्ञ-मीमांसा' पुस्तक के पृष्ठ १७७ व १७८ पर श्रद्धेय युधिष्ठिर मीमांसक जी ने कश्यप-पुत्र असुर को इस पृथिवी का प्रथम शासक बताया है। साथ ही वे (तैत्तिरीय-संहिता ६-३-७-२ का सन्दर्भ देकर) लिखते हैं कि पहले निश्चय ही यज्ञ असुरों में था....बाद में देवों के हाथ में आ गया......यह भी लिखा है कि असुरों का यज्ञ ध्वंसनात्मक (यज्ञ क्या ध्वंसनात्मक भी होता है) था। कृपया, इस पूरे प्रकरण का सही-सही भाव बताने का कष्ट करें।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने संस्कार-विधि के सामान्य प्रकरण में आघारावाज्याहुति व आज्याभागाहुति देने से पूर्व लिखा है कि 'स्रुवा को भर अँगूठा मध्यमा अनामिका से स्रुवा को पकड़ के.....' कृपया बताएँ कि स्रुवा को इन तीन से ही क्यों पकड़ा जाए?

३. इसी प्रकार गृहाश्रमविधि में **या दुर्हार्दो युवतयो......** मन्त्र के अर्थ करते हुए अन्त में लिखते हैं- '.....वृद्ध स्त्रियाँ हों, वे इस वधू को शीघ्र तेज देवें। इसके पश्चात् अपने-अपने घर को चली जावें, और फिर इसके पास कभी न आवें।' यहाँ कभी न आवें का भाव समझ में नहीं आया।

४. महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अन्त समय में यह किस आशय से पूछा था कि 'आज कौन-सा पक्ष, क्या तिथि और क्या वार है?' अन्यत्र संस्कार विधि में भी तिथि व नक्षत्रादि का उल्लेख मिलता है। हमने एक वैद्य से सुना है कि 'वैद्यक शास्त्रों' में लिखा है कि औषिधियों का प्रभाव तिथि, नक्षत्र, पक्ष तथा उत्तरायण व दक्षिणायन में अलग-अलग पड़ता है?

५. यजुर्वेद के आठवें अध्याय के ६१ वें मन्त्र के भावार्थ में महर्षि लिखते हैं कि 'इस प्रत्यक्ष चराचर जगत् के चौंतीस (३४) तत्त्व कारण है.....' ये तत्त्व कौन-से हैं?

६. यजुर्वेद के आठवें अध्याय के ६२ वें मन्त्र के भावार्थ में लिखा है-'मनुष्यों को चाहिए कि सदा यज्ञ का आरंभ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें।' यज्ञ की समाप्ति को करें से क्या तात्पर्य है? मैंने कुछ विद्वान् कुछ मन्त्रों को यजमान से बुलवाते हुए देखे हैं, क्या यह उचित है? अन्यथा इसका भाव क्या है? **-चैतन्यमुनि, सुन्दरनगर, जि. मण्डी, हि.प्र.**

समाधान- (क) शास्त्रों में यज्ञ का वर्णन विस्तार से मिलता है। यज्ञ का अर्थ करते समय ऋषियों ने व्यापक दृष्टि रखी है। यज्ञ केवल अग्निहोत्र ही नहीं है, अपितु इस ब्रह्माण्ड में जो हो रहा है वह भी यज्ञ ही है। प्रातः काल से ही सूर्य संसार को अपनी ऊर्जा देकर यज्ञ कर रहा होता है। रात्रि में चन्द्रमा अपना शीतल प्रकाश फैलाकर यज्ञ कर रहा होता है। इस प्रकार यज्ञ के व्यापक रूप को देख प्रलय और सृष्टि को भी यज्ञ का ही रूप दे डाला। प्रलय को ध्वंसनात्मक यज्ञ और सृष्टि उत्पत्ति को सृजनात्मक यज्ञ कहा गया है।

पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक ने इस को लेकर अपनी पुस्तक में विस्तार से वर्णन किया है। पाठकों की दृष्टि से उनके वचन ही यहाँ लिखते हैं- "यज्ञों के सम्बन्ध में कथानक वैदिक वाङ्मय में मिलता है वह दो प्रकार का है। एक सृष्टिगत आसुर और दैव यज्ञों के सम्बन्ध में, और दूसरा श्रौतसूत्रोक्त मानुष द्रव्य यज्ञों के सम्बन्ध में। दोनों के वर्णन में स्थान-स्थान पर देव और असुर शब्दों का प्रयोग मिलता है, अतः इन वचनों के विषय में बड़ी कठिनाई होती है। हम अपनी बुद्धि के अनुसार दोनों वचनों का विभाग करके लिखते हैं।"

प्रस्तुत आसुर यज्ञों पर विचार करने से पूर्व यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि भारतीय दर्शन के अनुसार सृष्टि और प्रलय का चक्र सदा चलता ही रहता है। परन्तु जब वर्तमान सृष्टि के विषय में लिखना होता है तो भारतीय ग्रन्थकार वर्तमान सृष्टि से पूर्व जो प्रलयावस्था रही थी, उसका पहले संक्षेप से वर्णन करते हैं, पश्चात् सृष्टि के सृजन का।

हमारे सौरमण्डल की स्थिति और प्रलय का काल ३ अरब ६४ करोड़ वर्ष का है। इसमें ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष दिन अर्थात् सृष्टि का स्थिति काल और ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष रात्रि अर्थात् प्रलयकाल होता है। प्रलयकाल के आरम्भ में आसुर=ध्वंसनात्मक प्रवृत्तियाँ उत्तरोत्तर वृद्धिगत होती हैं प्रलय के मध्य में पूर्णता को प्राप्त होने के पश्चात् दैवी प्रवृत्तियों का उत्तरोत्तर विकास होता है और आसुर प्रवृत्तियाँ घटती जाती हैं। इस कारण वर्तमान सृष्टि से पूर्व प्रलय काल में आसुर प्रवृत्तियों के कारण ध्वंसनात्मक यज्ञ हो रहे थे, अर्थात् प्रलयात्मक यज्ञ आसुर शक्तियों के पास था। इसी का निर्देश तैत्तिरीय संहिता ६.३.७.२ में किया है।

"असुरेषु वै यज्ञ आसीत्, तं देवा तुष्णीं होमेनापवृञ्जन्।।" अर्थात् - पहले निश्चय ही यज्ञ असुरों में था। देवों ने उसे तूष्णीम् होम से काट लिया=छीन

लिया। अभिप्राय स्पष्ट है कि जब प्रलयकाल में आसुरी शक्तियाँ प्रबल हो रही थीं, तब सर्गोन्मुखकाल में दैवी शक्तियों ने तूष्णीं=चुपचाप=शनैः-शनैः अपना कार्य=सर्जनरूप यज्ञ का आरम्भ किया और शनैः-शनैः सर्जन प्रक्रिया बढ़ती गई। इस प्रकार यज्ञ असुरों से देवों के हाथ में आ गया।''

इस पूरे प्रकरण में **पं. युधिष्ठिर जी** यज्ञ को विस्तृत रूप में देख रहे हैं। प्रलय और निर्माण इन दोनों को यज्ञ रूप में देखा है। सृष्टि का प्रलय होना, क्षय होना जब प्रारम्भ होता है, तब उसको ध्वंसनात्मक यज्ञ कहा है। असुर बिगाड़ने वाले होते हैं बनाने वाले नहीं। इस आसुरी स्वभाव को देख सृष्टि प्रलयावस्था में आसुरी शक्तियों का प्रबल होना माना है। ये आसुरी शक्ति प्रलय काल के मध्य तक प्रबल रहती हैं और वे आसुरी शक्तियाँ इस जगत् को नष्ट करने में लगी रहती हैं, इसी को ध्वंसनात्मक यज्ञ कहा है।

प्रलय के मध्यकाल के बाद धीरे-धीरे देव अर्थात् दैवी शक्तियाँ सक्रिय हो जाती हैं। देव अर्थात् निर्माण करने वाली शक्तियाँ जो बनाने वाली, बिगाड़ने वाली नहीं। सृष्टि निर्माण से पहले ध्वंसनात्मक यज्ञ असुर कर रहे थे, उस यज्ञ को शनैः-शनै-धीरे-धीरे देवों ने ले लिया हैं अर्थात् निर्माण प्रक्रिया को आरम्भ कर दिया। इस सृष्टि काल में दैवी शक्तियाँ कार्य करती हैं। इस प्रकार शास्त्र के आधार पर **पं. मीमांसक जी** ने सृष्टि प्रलय और सृष्टि निर्माण को यज्ञ रूप में कहा है।

ये देवासुर प्रक्रिया हम अपने ऊपर, समाज, राष्ट्र में कहीं भी देख सकते हैं। हमारे मन में अच्छे-बुरे दोनों विचार चलते रहते हैं। मन के अन्दर कभी बुरे विचार अधिक प्रबल होते हैं, जिससे हम टूटते जाते हैं, क्षय को, पतन को प्राप्त होते हैं। ये आसुरी शक्ति का प्रभाव है। और जब हम अच्छे विचारों से ओत-प्रोत होते हैं, तब हमारा निर्माण हो रहा होता है, उस समय हम पतन को प्राप्त न हो श्रेष्ठता को प्राप्त होते हैं। जैसे सृष्टि निर्माण और प्रलय प्रक्रिया में देव और असुर कोई व्यक्ति विशेष नहीं होते। वहाँ निर्माण और प्रलय में शक्ति विशेष लगती है, होती है, उसको देव और असुर कहा है, वैसे ही हमारे मन के अच्छे विचार देव हैं और बुरे विचार असुर। असुरों का काम पतनोन्मुख करना और देवों का काम उत्थान की ओर ले जाना है।

समाज राष्ट्र में भी दो प्रकार के मनुष्य देखे जाते हैं, सज्जन और दुर्जन। सज्जन देव हैं जो समाज राष्ट्र का भला चाहते हैं, भला करते हैं और दुर्जन असुर हैं जो कि समाज राष्ट्र के निर्माण में बाधा डालते रहते हैं। इस प्रकार इसको भी यज्ञ रूप में देखा जा सकता है

लौकिक इतिहास की दृष्टि से **पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी** इसी पुस्तक के पृष्ठ १८० पर लिखते हैं, ''असुर आरम्भ में श्रेष्ठ चरित्रवान् थे। प्रजापति कश्यप ने इनकी श्रेष्ठता और ज्येष्ठता के कारण पृथिवी का शासन इन्हें दिया। इन्हीं असुरों ने वेद के अनुसार वर्णाश्रम-विभाग और यज्ञों का प्रवर्तन किया। शासन अथवा विशेषाधिकार मिल जाने पर अंकुश न रखा जाय तो मनुष्य की मति धीरे-धीरे विकृत होने लगती है। इसी सिद्धान्त के अनुसार असुरों में गिरावट आयी। असुर शब्द, जो पहले श्रेष्ठ अर्थ (असु+र=प्राणों से युक्त=बलवान्) का वाचक था, वह उनके निकृष्ट आचरण से निकृष्ट का बोधक बन गया।...........'पूर्वे देवाः' यह असुरों के पर्यायवाची नामों में उपलब्ध होता है।''

यहाँ असुरों के श्रेष्ठ होने से प्रजापति ने उनको पृथिवी का शासन दिया ऐसा लिखा है, दूसरे स्थान पर स्वायंभुव मनु का पुत्र मरीचि प्रथम क्षत्रिय राजा हुआ- यह लिखा है। इन दोनों कथनों में विरोध दिख रहा है। इससे ऐसा विचार किया जा सकता है कि जो **मीमांसक जी** ने शास्त्र प्रमाणयुक्त लिखा है। वह क्षत्रिय राजा के विषय में न हो और जो दूसरा वचन है उससे तो स्पष्ट है ही की प्रथम क्षत्रिय राजा मरीचि हुआ। फिर भी यह इतिहास का विषय है, इसमें हम निश्चय पूर्वक नहीं कह सकते।

यज्ञ ध्वंसनात्मक भी होता है उसका आलंकारिक रूप को सृष्टि प्रलय की स्थिति को उपरोक्त प्रकरण में हमने देखी। इतिहास में भी ध्वसनात्मक यज्ञ किये जाते रहे हैं। एक राजा दूसरे राजा हराने नष्ट करने के लिए इस प्रकार के यज्ञों का आयोजन करता था। इस यज्ञ में उसको सफलता कितनी मिलती थी- यह तो कहा नहीं जा सकता, किन्तु ध्वंसनात्मक यज्ञ तो होता था। किसी को नष्ट करने के लिए ध्वसंनात्मक का प्रचलन था।

(ख) स्रुवा को तीन अंगुलियों से पकड़ने का विधान महर्षि दयानन्द द्वारा ही वर्णित मिलता है, कहीं और स्थान पर इसका वर्णन हो ऐसा देखने में नहीं आया। तीन से पकड़े जाने का प्रयोजन क्या है, इसका भी वर्णन देखने को नहीं मिलता। हाँ अपनी कुछ संगतियाँ तो लगा सकते हैं। पाँचों अँगुलियों में एक-एक महाभूत कुछ लोग मानते हैं- इस आधार अँगुलियों की मुद्रा विशेष भी बनाई जाती हैं, जिससे कुछ शारीरिक प्रभाव पड़ता है। हो सकता है यहाँ भी वह प्रभाव होता हो, इस दृष्टि इन तीनों से स्रुवा पकड़ने लिए कहा हो। अथवा अन्य कोई प्रयोजन विद्वान् लोगों ने विचार किया हो तो हमें ज्ञात करावें।

(ग) गृहाश्रमप्रकरण में महर्षि ने जो अथर्ववेद का यह मन्त्र दिया है-

या दुर्हार्दो युवतयो याश्चेह जरतीरति।

वर्चो न्वस्यै सं दत्ताथास्तं विपरेतन।।

अर्थ- (याः) जो (दुर्हार्दः) दुष्ट हृदयवाली अर्थात् दुष्टात्मा (युवतयः) जवान स्त्रियाँ (च) और (याः) जो (रह) इस स्थान में (जरती) बूढ़ी=वृद्ध स्त्रियाँ हों, वे (अपि) भी (अस्थै) इस वधू को (नू) शीघ्र (वर्चः) तेज (संदत्त) देवें (अथ) इसके पश्चात् (अस्तम्) अपने-अपने घर को (विपरेतन) चली जाएँ और फिर कभी इसके पास न आवें।

यहाँ प्रकरण विवाह और गृहाश्रम का है, जब नववधू से बहुत-सी स्त्रियाँ मिलने आती हैं, तब उनमें बहुत-सी कुलीन और कुछ मन्त्र में वर्णित दुष्ट हृदय वाली भी होती हैं। यहाँ उन दुष्ट हृदय वाली स्त्रियों की ओर संकेत किया है। यदि ऐसी स्त्रियाँ वधू के पास आवें तो वधू उनको महत्त्व न देवे। जब वधू उनको महत्त्व न देगी, तब उनका मान-सम्मान न होगा अर्थात् उनका तेज ले लिया जायेगा और वहाँ लौट, वापस न आवेंगी। जब हम किसी को महत्त्व नहीं देते, तब सामने वाला उपेक्षित होकर श्रीहीन हो जाता है उसका तेज ले लिया जाता है। ऐसा यहाँ भी कुछ इसी प्रकार का है। मन्त्र में निर्देश किया है कि दुष्ट हृदय वाली स्त्रियाँ कुलीन स्त्रियों के पास कभी न आवें। जब उनके साथ उपेक्षा का बर्ताव किया जायेगा, तब वे उनके पास भी न आवेंगी। यही अभिप्राय प्रतीत हो रहा है। इस मन्त्र क विषय में विस्तार से जानने के लिए **पं. मनसाराम जी** वैदिक तोप की पुस्तकें **''पौराणिक पोप पर वैदिक तोप''** पृष्ठ ३६६ से देखा जा सकता है।

(**घ**) महर्षि दयानन्द ने अन्त समय में जो तिथि वार आदि पूछे, वे सामान्यरूप से पूछे गये प्रतीत होते हैं। इसमें कोई बड़ा रहस्य हो ऐसा लग नहीं रहा। कई बार हम श्रद्धावशात् सामान्य को भी विशेष रूप में देखने का प्रयास करने लगते हैं और इस हमारे प्रयास में कहीं न कहीं पौराणिकता आ जाती है।

हाँ आपने जो औषधियों पर प्रभाव की बात कही वह तो सकती है, होती होगी।

(**ङ**) यजुर्वेद के ८.६१ वें मन्त्र में जो चौंतीस तत्त्व कहे हैं, वे महर्षि दयानन्द ने इस मन्त्र के पदार्थ में दे रखे हैं। वे हैं- आठों वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, इन्द्र, प्रजापति और प्रकृति। ८+११+१२+१+१+१=३४

(**च**) यजुर्वेद ८.६२ वें मन्त्र के भावार्थ में महर्षि लिखते हैं-

मनुष्यैः सदा यज्ञारम्भपूर्त्ती कृत्वा
प्रजाभ्यो महत्सुखं प्रापणीयमिति।।

इस महर्षि का तात्पर्य है कि यज्ञ को विधिवत् आरम्भ कर उसको उसी प्रकार विधिवत् सम्पन्न करें, पूर्ण करें। पूर्ण करनासमाप्ति का द्योतक है, अर्थात् यज्ञ को आरम्भ करके बीच में न छोड़ें। उसको पूरा करें, यह तात्पर्य है।

विद्वान् लोग यजमान् से कौन-से मन्त्र बुलवाते हैं और किस प्रयोजन से बुलवाते हैं- वह लिखा जाता तो उचित-अनुचित पर विचार हो सकता था, उसके विना कैसे कहें।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

आर्यजगत् के समाचार

१. वेद प्रचार सप्ताह मनाया- आर्यसमाज बालोतरा का वेद प्रचार सप्ताह ३० अगस्त से ५ सितम्बर श्री कृष्ण जन्माष्टमी तक हर्षोल्लास से मनाया। प्रतिदिन यज्ञ पं. रामनिवास गुणग्राहक वैदिक प्रवक्ता परोपकारिणी सभा अजमेर के द्वारा कराया जाता रहा। मथुरा से पधारे श्री देवीसिंह आर्य के भजनोपदेश सुमधुर गीत-संगीत के साथ होते रहे, श्रोताओं को आनन्दित किया। बाद में श्री रामनिवास गुणग्राहक के सार गर्भित प्रवचन वेद, यज्ञ, धर्म, ईश्वर का स्वरूप और ईश्वर की भक्ति आदि विषयों को सुनकर सभी आर्यजन बहुत आनन्दित होते। पं. देवीसिंह जी के सुमधुर भजन सुनकर श्रोता झूम उठते।

२. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- दि. २ से ४ अक्टूबर तक आर्यसमाज जगाधरी वर्कशाप का वार्षिक उत्सव धूमधाम से मनाया गया। इसमें ईश्वर, नारी उत्थान, गृहस्थ की सफलता, आर्य होने पर गर्व व यज्ञ का सच्चा स्वरूप इत्यादि विषयों पर पं. इन्द्रजित् देव व श्री रणवीर शास्त्री ने गहनतापूर्वक विचार प्रस्तुत किए। श्री मोहित शास्त्री ने अपने भजनों द्वारा श्रोताओं का रसास्वादन किया। यज्ञ के ब्रह्मा पं. इन्द्रजित् देव रहे। अन्तिम दिन विशाल ऋषि लंगर का प्रबन्ध किया गया।

३. वेद प्रचार सम्पन्न- प्रधाना श्रीमती विजय गुप्ता के प्रधानत्व में आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अम्बाला छावनी का वेद प्रचार वार्षिकोत्सव दि. ८ से ११ अक्टूबर २०१५ तक धूमधाम से मनाया गया। यज्ञ संयोजक पं. शिव कुमार शास्त्री, यज्ञ के ब्रह्मा डॉ. वेदपाल तथा भजनोपदेशक नरेश दत्त आर्य, डॉ. महेश विद्यालंकार, डॉ. प्रतिभा पुरंध आदि विद्वानों ने श्रोताओं को सम्बोधित किया और वेद प्रचार-प्रसार के लिये आह्वान किया। समापन पर श्री अनिल विज, स्वास्थ्य व खेल मन्त्री हरियाणा ने श्रोताओं को सम्बोधित किया।

४. हिन्दी सम्मेलन सम्पन्न- वैदिक वीरांगना दल की ओर से आयोजित हिन्दी कन्या सम्मेलन २३ अक्टूबर २०१५ को संस्था कार्यालय बी-१२३, मालवीय नगर, जयपुर, राज. पर सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर सुनीता बैराठी, रिटायर्ड आईएएस जी.पी. गोस्वामी, मुकुट बिहारी, शोभा, अनिता एवं श्वेता

डगायच आदि संस्था के सदस्यों ने बच्चों को हिन्दी के महत्त्वों के बारे में बताया तथा परीक्षा में सफलता के गुर भी सिखाए एवं हिन्दी निबन्ध कला, मुहावरों और व्याकरण को खेल-खेल में समझाया। प्रश्नोत्तर खेल प्रणाली में कन्याओं का उत्साहवर्धन करने के लिए उन्हें कई प्रकार के उपहार भी दिए गए। संस्था की अध्यक्षा अनामिका शर्मा ने बताया कि आज के इस हिन्दी सम्मेलन में विभिन्न स्कूलों से आए करीब ६० बच्चों ने भाग लिया।

५. ऋग्वेद पारायण यज्ञ सम्पन्न- गोविन्दपुरी रामनगर सोडाला जयपुर के धर्मप्रेमियों द्वारा १६ से १८ अक्टूबर २०१५ तक ऋग्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया गया। प्रख्यात वैदिक विद्वान् डॉ. रामपाल विद्याभास्कर के ब्रह्मत्त्व में वेदपाठ डॉ. कृष्णपालसिंह, पं. भगवान सहाय विद्यावाचस्पति एवं श्रीमती श्रुति शास्त्री द्वारा हुआ। मंच संयोजन डॉ. सन्दीपन आर्य का रहा। श्री जवाहर वधवा, श्रुति शास्त्री, मेहरा परिवार के मधुर एवं प्रभावोत्पादक भजन भी हुए।

६. वार्षिकोत्सव मनाया- आर्यसमाज नींदड़ का ४८वाँ वार्षिकोत्सव दि. २३ से २५ अक्टूबर को मनाया। भजनोपदेशक श्री सत्यपाल सरल-देहरादून व श्रीमती श्रुति शास्त्री ने भजनों से श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध रखा। डॉ. रामपाल विद्याभास्कर के प्रवचन सग्राह्य शैली में ईश्वर प्रणिधान पर केन्द्रित रहे, वहीं डॉ. कृष्णपालसिंह ने वेदानुकूल आचरण से ही समाज व राष्ट्रोत्थान पर बल दिया। समापन सत्र में मंचस्थ प्रतिभाओं में पं. वासुदेव शास्त्री, देवव्रत शास्त्री, निदेशक डी.ए.वी. एम.एल. गोयल एवं प्राचार्य ए.के. शर्मा थे।

७. सम्मानित- स्वतन्त्रता सेनानी स्व. श्री छोटूसिंह आर्य के ९५वें जन्म दिवस पर 'श्रीमती शारदा देवी छोटूसिंह आर्य चेरिटेबल ट्रस्ट' अलवर द्वारा दिनांक ९ अगस्त २०१५ को आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर के विशाल सभागार में, आर्यसभा, अलवर के प्रधान श्री जगदीश प्रसाद आर्य को 'आर्य शिरोमणि' की उपाधि से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर आर्य कन्या विद्यालय समिति की निदेशक श्रीमती कमला शर्मा ने प्रशस्ती पत्र का वाचन कर उन्हें सादर भेंट किया। श्री अशोक आर्य एवं श्री प्रदीप आर्य ने शॉल ओढ़ाकर उन्हें सम्मानित किया एवं श्रीमती इन्द्रा आर्या, श्रीमती सुमन आर्या सहित सभी ट्रस्टीगणों ने उन्हें प्रतीक चिह्न व ४१००/- रु. की राशी सम्मानार्थ भेंट की।

८. वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न- आर्यसमाज मन्दिर, चौक आर्यसमाज, पटियाला द्वारा दि. १४ से १८ अक्टूबर २०१५ तक बड़ी धूमधाम और हर्षोल्लास के साथ वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया। इस अवसर पर आचार्य श्री हरिशंकर अग्निहोत्री (आगरा वाले), डॉ. वीरेन्द्र विद्यालंकार, अध्यक्ष संस्कृत विभाग, पंजाब यूनिवर्सिटी चण्डीगढ़, स्वामी ब्रह्मवेश जी और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के भजनोपदेशक श्री अरूण कुमार ने प्रवचन एवं भजनोपदेश से जनता का मार्गदर्शन किया।

९. प्रचार कार्यक्रम सम्पन्न- आर्यसमाज के तत्वावधान में आयोजित कार्यक्रम बाल्मीकि बस्ती, रामबाग, सूरजकुण्ड, मेरठ में बस्ती के समस्त बाल्मीकि भाई-बहिनों एवं मेरठ शहर की अनेक आर्यसमाजों के आर्यजनों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। सर्वप्रथम यज्ञ प्रात: ९ बजे श्री प्रेमराज शास्त्री के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। आचार्य प्रणव प्रकाश शास्त्री ने उपदेश किये।

१०. वार्षिकोत्सव- आर्यसमाज गंगानगर, राज. का वार्षिकोत्सव दि. २६ से २९ नवम्बर तक मनाया जायेगा। इसमें सामवेद पारायण यज्ञ आचार्या धारणा जी के ब्रह्मत्व में वेद पाठ आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज, सिरोही द्वारा होगा। वैदिक विद्वान् श्री सत्येन्द्र आर्य मेरठ, आचार्या धारणा जी एवं भजनोपदेशक श्री घनश्याम प्रेमी मुजफ्फरनगर कार्य की शोभा बढ़ायेंगे।

११. सम्मानित- गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के प्रतिष्ठित विद्वान् डॉ. विनोदचन्द विद्यालंकार उनके वृहदाकार ग्रन्थ 'श्रुति मंथन' के प्रयणन के उपलक्ष्य में श्री घूड़मल प्रहलाद कुमार 'आर्य साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया। यह सम्मान पतंजलि योग विश्वविद्यालय हरिद्वार के कुलपति आचार्य बालकृष्ण जी की उपस्थिति में किया गया। आप सुप्रसिद्ध विद्वान् आचार्य रामनाथ जी वेदालंकार के सुपुत्र हैं।

१२. वेद प्रचार सम्पन्न- आर्यसमाज स्टेशन रोड, पीलीभीत, उ.प्र. में दि. १ से ५ सितम्बर तक यजुर्वेद पारायण यज्ञ, वेद कथा तथा वृष्टि यज्ञ का आयोजन किया गया, जिसमें सैंकड़ों श्रद्धालुओं ने भाग लिया। इस समारोह में वेद सम्मेलन, गऊ रक्षा, चरित्र निर्माण, स्त्री शिक्षा, राष्ट्र रक्षा, पाखण्ड मिटाओ सम्मलेन करके जनता को जागृत किया गया। इस अवसर पर युवक-युवतियों की विशेष उपस्थिति रही। वैदिक विद्वान् पं. नन्दलाल निर्भय भजनोपदेशक के भिन्न-भिन्न विषयों पर भजनोपदेश होते रहे, श्री ओसर्बुद्ध आचार्य-जयपुर के प्रवचन हुए।

वैवाहिक

१३. वधु चाहिये- आर्यसमाजी परिवार, संस्कारित आयु- ११.७.१९८६ वर्ष, कद- ५ फूट ११ इंच, शिक्षा- एम.एस.सी. एवं सीनियर रिसर्च फैलोशिप, युवक हेतु आर्यसमाजी परिवार की संस्कारित युवती चाहिए। **सम्पर्क-०९४५७४०५०७६**

चुनाव समाचार

१४. आर्यसमाज शृंगार नगर, लखनऊ, उ.प्र. के चुनाव में **प्रधान**- श्री यतेन्द्रसिंह, **मन्त्री**- श्री राकेश माहना, **कोषाध्यक्ष**- श्रीमती आशा मेहता को चुना गया।

१५. आर्यसमाज भुसावर, जि. भरतपुर, राज. के चुनाव में **प्रधान**- वैद्य श्री दिनेशचन्द्र पाण्डेय, **मन्त्री**- श्री मा. प्रकाशचन्द शर्मा, **कोषाध्यक्ष**- श्री कमलकान्त शर्मा को चुना गया।

शेष भाग पृष्ठ संख्या ३५ पर.....

योग साधना शिविर, ऋषि उद्यान, अजमेर
२५ अक्टूबर से १ नवम्बर, २०१५

आर जे/ए जे/80/2015-2017 तक प्रेषण : १५ नवम्बर, २०१५ ३९५९/५९

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में

१३२ वाँ ऋषि बलिदान समारोह

२०,२१,२२ नवम्बर २०१५

सभी आर्यजनों को सादर आमन्त्रण है।

विशेष आकर्षण : ऋग्वेद पारायण यज्ञ, वेदगोष्ठी, चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता, विद्वानों का सम्मान

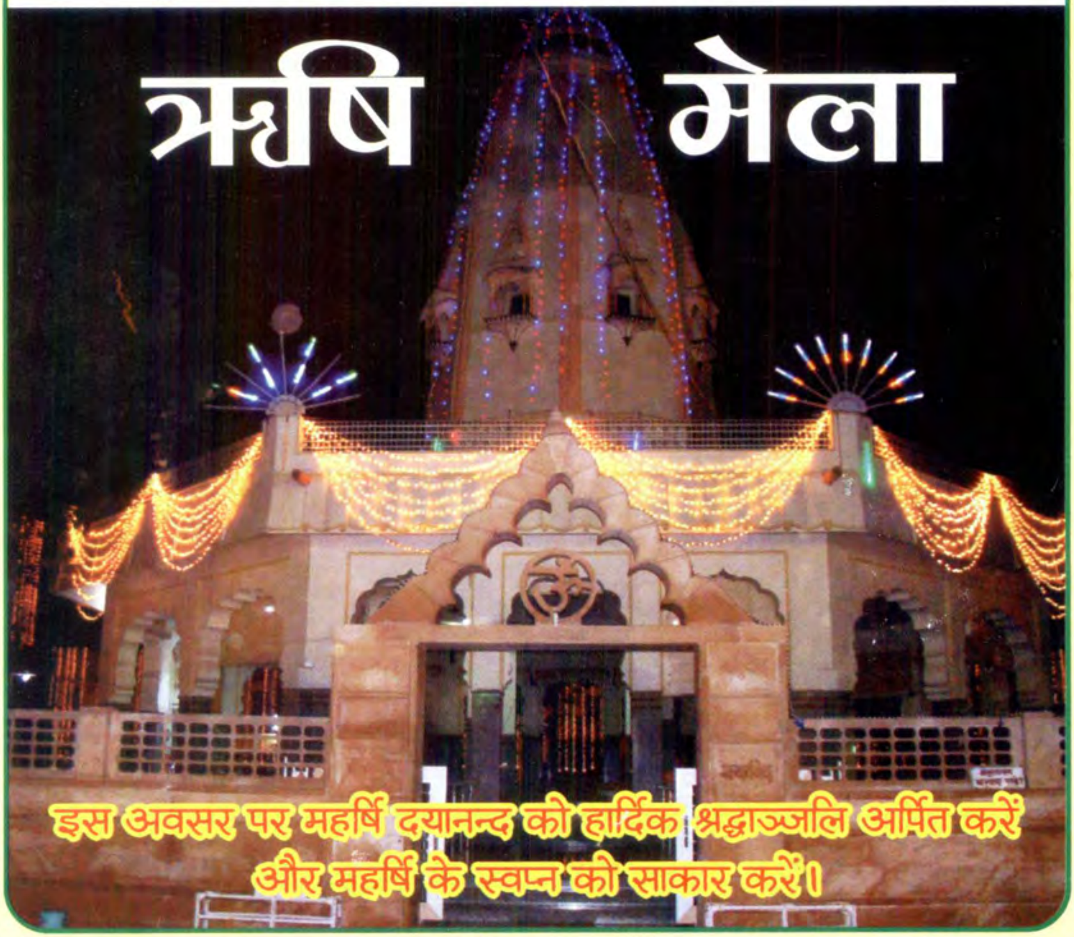

TAL9829797513

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१

सेवा में,